VISHWA - Hindi Literary Magazine

PRINTED VISHWA - ISSN 25721550
ONLINE e-VISHWA - ISSN 25721569

JANUARY 2025

विश्वा

अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति की त्रैमासिक मुख पत्रिका

वर्ष 41 अंक 1 जनवरी 2025

भारत का संविधान

हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को:
सामाजिक, आर्थिक, और राजनैतिक न्याय; विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म, और उपासना की स्वतंत्रता;
प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए, तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए
दृढ़संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारिख २६ नवंबर, १९४९ ई (मिति मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी, सम्वत दो हजार छह विक्रमी) को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित, और आत्मार्पित करते हैं।

भारत

— अवतार सिंह संधू

मेरे सम्मान का सबसे महान शब्द
जहाँ कहीं भी प्रयोग किया जाए
बाक़ी सभी शब्द अर्थहीन हो जाते है

इस शब्द के अर्थ
खेतों के उन बेटों में है
जो आज भी वृक्षों की परछाइयों से
वक़्त मापते है

उनके पास, सिवाय पेट के, कोई समस्या
नहीं
और वे भूख लगने पर
अपने अंग भी चबा सकते है

उनके लिए ज़िन्दगी एक परम्परा है
और मौत का अर्थ है मुक्ति

जब भी कोई
'राष्ट्रीय एकता' की बात करता है
तो मेरा दिल चाहता है–
उसे बताऊँ कि भारत के अर्थ
किसी दुष्यन्त से सम्बन्धित नहीं
वरन खेत में दायर हैं
जहाँ अन्न उगता है,
जहाँ सेंध लगती है

अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति की त्रैमासिक मुख पत्रिका

विश्वा

प्रकाशन त्रैमासिक – जनवरी, अप्रैल, जुलाई, अक्टूबर
Published Quarterly – January, April, July, October

प्रबन्ध सम्पादक - **श्री आलोक मिश्रा**
Managing Editor - **Mr. Alok Misra**
New Hampshire, U.S.A.
ई-मेल - alok.misra@hindi.org
दूरभाष - 603-681-9150

रमेश जोशी, प्रधान सम्पादक
Mr. Ramesh Joshi, Chief Editor
Email – joshikavirai@gmail.com
editor@hindi.org

श्रीमती अर्चना पांडा, डिजीटल मीडिया एडिटर
Mrs. Archana Panda, Digital Media Editor
Email – panda_archana@yahoo.com

भारती मिश्र, संकलन, संपादन सहयोग
Email – batua896@gmail.com

यदि आप चाहते हैं कि आपके मित्रगण भी विश्वा पढ़ें, विश्वा से जुड़ें तो हमें उनका ई मेल का पता उपलब्ध करवा दें जिससे हम उन्हें विश्वा की पीडीएफ़ भिजवा सकें। संपर्क – mail@hindi.org

विश्वा के लेखकों से

1. एक बार में दो से ज्यादा प्रविष्टियाँ न भेजें।
2. रचनाओं में एक पक्षीय, कट्टरतावादी, अवैज्ञानिक, साम्प्रदायिक, रंग-नस्लभेदी, अतार्किक, अन्धविश्वासी, अफवाही और प्रचारात्मक सामग्री से परहेज करें। सर्वसमावेशी और वैश्विक मानवीय दृष्टि अपनाएँ।
3. अपनी रचना की प्रूफ रीडिंग करके भेजें। वर्तनी (Spelling) के लिए हम जिम्मेदार नहीं होंगे। इससे रचना की गुणवत्ता भी संदेहास्पद हो जाती है।
4. रचना एरियल यूनिकोड MS या मंगल फॉण्ट (12) में भेजें।
5. पेज पर सिर्फ रचना का नाम और रचना ही लिखें। रचना छपने लायक फॉर्मेट में भेजें।
6. रचनाएं एक से अधिक हों तो अलग-अलग word और pdf document में भेजें।
7. अपने बायो डेटा में डाक का पता, ईमेल, फोन नंबर ज़रूर भेजें। हाँ, ये सूचनाएँ उतनी ही छापी जायेंगी जितना आप चाहेंगे लेकिन हमारी जानकारी के लिए ये आवश्यक हैं। यदि आपकी पुस्तकें प्रकाशित हैं तो उनका विधा सहित उल्लेख भी करें। अपने बायोडाटा को word और pdf document में भेजें।
8. अपनी पासपोर्ट साइज़ तस्वीर अलग से भेजें। रचना के साथ अप्रकाशित और मौलिक होने का प्रमाणपत्र भी संलग्न करें।
9. रपट, रचना, समाचार के साथ के फोटो 250px तक होनी चाहिए।
10. 'विश्वा' के लिए भेजी गई रचना दो महिने तक कहीं न भेजें।
11. इंटरनेट की सुविधा का दुरुपयोग करते हुए एक ही रचना पचासों पत्रिकाओं में भेजकर अपनी और हमारी प्रतिबद्धता को सस्ता न बनाएँ।
12. प्रवासी अपने यहाँ की किसी व्यक्तिगत उपलब्धि तथा सांस्कृतिक, साहित्यिक और सामाजिक हलचलों की सचित्र-प्रामाणिक जानकारियाँ उचित तरीके से भेज सकते हैं।
13. यदि छंद का ज्ञान नहीं है तो कोई बात नहीं लेकिन यदि छंद में लिखें तो उसके अनुशासन का पूरा पालन करें।
14. हिन्दी से इतर भाषाओं के जीवन मूल्यों और मानवीय गरिमा से संपन्न रचनाओं का अनुवाद भी भेज सकते हैं। ऐसे में जहाँ मूल लेखक से अनुमति आवश्यक हो तो वह भी संलग्न करें।
15. पुस्तक की समीक्षा के लिए दो प्रतियाँ भेजें। हस्तलिखित, स्केनित और पीडीएफ़ वाली सामग्री का उपयोग हम नहीं कर सकेंगे।
16. किसी भी रचना पर किसी प्रकार के मानदेय का कोई प्रावधान नहीं है।

रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनका अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति की रीति-नीति से कोई संबंध नहीं है।

अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति

International Hindi Association

संस्थापक – डॉ. कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह
Founder – Dr. Kunwar Chandraprakash Singh

बोर्ड के सदस्य / Board of Trustees

श्री तरुण सुरती (TN) अध्यक्ष, न्यासी समिति
Mr. Tarun Surti, Chairman 615-812-6164 tarunsurti@yahoo.com

श्री आलोक मिश्र (NH)
Mr. Alok Misra 603-681-9150 alok.iha@gmail.com

डॉ. रवि प्रकाश सिंह (TN)
Dr. Ravi Prakash Singh 615-785-7888 ngdsdg@gmail.com

श्री स्वप्न धैर्यवान (TX)
Mr. Swapan Dhairyawan 281-382-0348 swapandha@yahoo.com

श्री इंद्रजीत शर्मा (NY)
Mr. Inderjeet Sharma 917-273-9744 guru.richmondhill@gmail.com

कार्याधिकारी / Executive Officers

डॉ. शैल जैन (OH) अध्यक्ष
Dr. Shail Jain, President 330-421-7528 president@hindi.org

श्री संजीव जयसवाल (TX) सचिव
Mr. Sanjeev Jaiswal, Secretary 508-369-7639 secretary@hindi.org

श्री चन्द्रकांत पटेल (TX) कोषाध्यक्ष
Mr. Chandrakant Patel, Treasurer 832-423-7979 treasurer@hindi.org

कार्यकारी समितियाँ Committees Chairs

प्रौद्योगिकी / Technology

श्री संजीव जयसवाल
Mr. Sanjeev Jaiswal (TX) 508-369-7639 secretary@hindi.org

श्री उमेश कुमार
Mr. Umesh Kumar (TN) 615-870-7088 umeshkharwar79@gmail.com

हिन्दी शिक्षण / Hindi Education

डॉ. राकेश कुमार
Dr. Rakesh Kumar (IN) 317-730-4086 arksri@yahoo.com

श्रीमती किरण खेतान
Mrs. Kiran Khaitan (OH) 330-622-1377 kirankhaitan@yahoo.com

निधि संग्रह / Fundraising

डॉ. शोभा खंडेलवाल
Dr. Shobha Khandelwal (OH) 330-421-6638 shobhakhandelwal@gmail.com

शाखा समन्वय / Chapter coordination

श्रीमती अनीता सिंघल
Mrs. Anita Singhal (TX) 817-319-2678 anitagsinghal@gmail.com

सदस्यता / Membership

चौधरी प्रताप सिंह
Choudhari Pratap Singh (MD) 202-413-5918 chpratapsingh1008@gmail.com

विश्वा / श्री रमेश जोशी
Vishwa / Mr. Ramesh Joshi (India) 91-94601-55700 joshikavirai@gmail.com

संवाद / डॉ. शैल जैन
Samvad Newsletter / Dr. Shail Jain 330-421-7528 president@hindi.org

शाखा संयोजक, Chapter Presidents USA

श्री अश्वनी भरद्वाज
Mr. Ashwani Bhardwaj NE Ohio 216-926-7890 ashwani_69@yahoo.com

श्रीमती वीणा शर्मा
Mrs. Veena Sharma Dallas, TX 214-455-6592 mohan_veena@yahoo.com

श्री सौंदर्य (संजय) सोहोनी
Mr. Saundarya Sohoni Houston 281-943-9758 saundaryasohoni@gmail.com

श्रीमती कमला पंचाल
Mrs. Kamla Panchal New York, NY 516-279-6612 kamlapanchal@aol.com

सुश्री सीमा वर्मा
Ms Seema Verma Nashville, TN 904-525-1795 call.seema@gmail.com

चौधरी प्रताप सिंह
Choudhary Pratap Singh MD 202-413-5918 chpratapsingh1008@gmail.com

डॉ. बबिता श्रीवास्तव
Dr. Babita Srivastava New Jersey, NJ 908-892-6133srivastava.babita@yahoo.com

श्री विरेश सिंह
Mr. Viresh Singh Philadelphia,PA 484-425-7734 vireshsingh999@gmail.com

श्रीमती विद्या सिंह
Mrs. Vidya Singh Indiana 317-514-6857 ihaindiana@gmail.com

शाखा संयोजक, Chapter Presidents India

श्रीमती मुन्ना जगेतिया Hyderabad
Mrs. Munna Jagetia A.P., Telangana 91-94901-89715 munnaop@gmail.com

डॉ. मनमोहन शुक्ला
Dr. Manmohan Shukla Prayagraj, UP 91-94502-39154 shukla.mm.147@gmail.com

डॉ. शोभारानी सिंह Bihar
Dr. Shobharani Singh Jharkhand 91-99393-92605 drshobharani.vama@gmail.com

श्री अशोक लव
Mr. Ashok 'Lav' Delhi, NCR 91-89206-08821 kumar1641@gmail.com

डॉ.(प्रो.) ओम प्रकाश तिवारी
Dr. (Prof.) Om Prakash Tiwari Maharastra 91-96511-23803 optiwari9651@gmail.com

मुद्रण एवं प्रस्तुति :

अनुज्ञा बुक्स

(पुस्तक प्रकाशक, विक्रेता और मुद्रक)

1/10206, LANE NO. 1E, WEST GORAKH PARK, SHAHDARA, DELHI-110032

CELL/WhatsApp 07291920186, 09350809192 • e-mail: anuugyabooks@gmail.com

salesanuugyabooks@gmail.com • www: anuugyabooks.com

अनुक्रम

सम्पादकीय	तुम मेरे पास होते हो...	5
विशिष्ट आलेख	संस्कृति का स्वरूप *–वासुदेवशरण अग्रवाल*	6
विदेश में देसी (9)	बुनियाद के लिए बुनियादी शिक्षा *–धर्मपाल महेंद्र जैन*	8
किशोरों के लिए	पिता के पत्र : पुत्री के नाम – *पं. जवाहरलाल नेहरू अनुवाद – प्रेमचंद*	
	27. आर्यों का हिन्दुस्तान में आना 28. हिन्दुस्तान के आर्य कैसे थे?	10
	29. रामायण और महाभारत	11
उज़्बेकिस्तान में हिन्दी का परचम	लाल बहादुर शास्त्री विद्यालय *–डॉ. मनीष कुमार मिश्रा*	12
भूल-चूक	'प्रायश्चित' शेष कहानी	13
विशिष्ट शृंखला : ज्ञानपीठ पुरस्कार 1980	भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार : शंकरन कुट्टी पोट्टेक्काट *–डॉ. दीपक पाण्डेय*	14
वे दिन : वे लोग	मैं बहुत गरीब आदमी हूँ : सेठ सोहनलाल दूगड़ *–संकलन : शिवांगी जोशी*	16
	मेहर बाई टाटा *संकलन : शिवांगी जोशी*	34
प्रसंग : इस वर्ष का साहित्य का नोबल : हान कांग	*–चारु सिंह*	17
वातायन	अंग्रेजी से अनूदित–इटली की कवयित्री मारिया मिराग्लिया की तीन कविताएँ	19
	अनुवाद *मुशर्रफ अली*	19
पर्व-त्योहार : शिवरात्रि	स्त्री स्वातंत्र्य और सहअस्तित्व का पर्व *–पंकज श्रीवास्तव*	20
शिवरात्रि विशेष– रूपांतर : संस्कृत -उर्दू	"रुद्राष्टकम्" – *ज़ाहिद अबरोल*	21
मज़े-मज़े में :	फ़ेसबुक : भक्तों का अरण्यरोदन *–राकेश अचल*	22
हिन्दी संस्थाओं की पतनगाथा-6	संसदीय राजभाषा समिति *–डॉ. अमरनाथ*	23
प्रेरक	1. जयकिशोर प्रधान 2. नेहा साँगवान	25
बधाई	1. सामंता हार्वे 2. गुकेश डी. 3. मदन बी. लोकुर	25
बूंद में सागर	संज्ञा-संख्या *–शशिकान्त जोशी*	26
सरोकार	नारी शक्ति *–डॉ. सुधा कुमारी*	28
नोबल पुरस्कार 2024	प्रस्तुति : *शिवांगी जोशी*	32
विचार	अंतिम संस्कार *–डॉ. रणजीत*	33
पुरस्कृत संकलन से एक कविता	गगन गिल	34
महान लोग : महान विचार	मार्टिन लूथर किंग जूनियर	34
हलचल	कानून का राज	13
	साहित्य अकादमी युवा पुरस्कार 2024	35
	अकादमी पुरस्कार 2024 (मुख्य)	35
गणतंत्र का अमृतकाल : परिशिष्ट	भारतीय संविधान की प्रस्तावना	36
	दुनिया का एक मात्र सचित्र संविधान	37
जानकारी	भारत के मूल हस्तलिखित संविधान का संरक्षण *–डॉ. राकेश कुमार*	38
विरासत	साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज *–भगतसिंह*	41
आलेख	गणतंत्र और लोकतंत्र *–डॉ. अरुण कुमार त्रिपाठी*	44
सनातन संगीत	मेरा-तुम्हारा-हमारा व्यष्टि से समष्टि का राग	45
प्रसंग	हमारा संविधान और हमारा लोकतंत्र *–वेदव्यास*	48
विविध	भारत का संविधान और महिलाएँ	39
	भारत की राष्ट्रीय शपथ	40
	रोचक : जन गण मन	40
	प्रथम गणतंत्र दिवस : चित्रों में	43
	भारतीय संविधान के नीति निर्देशक सिद्धांत	43
	भारतीय संविधान की प्रमुख विशेषताएँ	46
स्थापत्य	नए संसद भवन के सभी 6 द्वार	47

अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति

International Hindi Association

A 501(c)(3) Non-profit Organization ● 2129 Stratford Road, Murfreesboro, TN 37129, U.S.A. ● Founded in 1980

www.hindi.org

MEMBERSHIP FORM

Please fill out all questions on the form clearly, sign, and return it via email to: **treasurer@hindi.org**, or via mail to: Treasurer, 5907 Majestic Pines Dr, Kingwood, TX 77345, USA. You may print the form, sign, and email a camera image.

Membership fee is nonrefundable. Associate Life members enjoy same benefits as regular Life members, except for voting rights. All members get: 1) Digital Vishwa magazine quarterly, and Samvad newsletter monthly. 2) Discounts on IHA products, services, and events. 3) Volunteer opportunities in US and India. 4) Early notifications.

Title: ☐Mr. ☐Mrs. ☐Ms. ☐Dr. ☐Prof. **Date:** _____

First Name: _____ **Last Name:** _____

Email ID: _____ **Mobile Number:** _____

Street Address: _____

City: _____ **State:** _____

Postal Code: _____ **Country:** _____

Spouse's Name: (optional) ……..……..

Membership: Select one

☐ Life Member $250 USD ☐ Associate Life Member $150 USD

☐ Annual Member $35 USD ☐ Institutional Annual Member $75 USD

Please make check payable to 'International Hindi Association' in USD and mail to above-mentioned address. *Or* ***Pay Online***

Do you wish to receive paper copy of Vishwa magazine, please check here: ☐

There could be a (USD $15/year) printing & mailing charge in the future.

Specimen Signature:
Print or Insert photo of your Signature

Would you like to be a part of the Leadership Team and volunteer in your area of interest or expertise ?

(Check all that apply)

☐ Hindi/English Content Writing
☐ Information Technology, Website
☐ Social media, Digital Marketing
☐ Fundraising, Sponsorships
☐ Public/Government Relations
☐ Hindi Education
☐ Graphics, Video
☐ Organization
☐ Legal, Compliance
☐ Sales, Support
☐ Other (please specify): _____

'Vishwa' welcomes original writings in Hindi from all quarters. Writings dealing with immigrant experiences are especially welcome. For further information, or to submit your writings for consideration, please contact: The Editor, Mr. Ramesh Joshi, Phone USA +1 (330) 688-4927, India +91 94601 55700; Email: joshikavirai@gmail.com or editor@hindi.org

Should this information change in the future, please contact us to update. All your information is kept confidential.
International Hindi Association is a non-political, non-religious, lingo-cultural organization. Jan 2024

सम्पादकीय

तुम मेरे पास होते हो...

'एकोहं बहुस्याम' का अर्थ है, 'मैं एक हूँ, लेकिन कई हो जाऊँ'। यह वाक्य छान्दोग्य उपनिषद से लिया गया है। इसका मतलब है कि एक ही ब्रह्म, अपने संकल्प से कई रूपों में विस्तृत है। ब्रह्म शब्द बृह् धातु से बना है जिसका अर्थ है– फैलाव, विस्तार, व्यापक। उपनिषद् के अनुसार, सृष्टि ब्रह्म से उत्पन्न संकल्प द्वारा हुई। अद्वैत ब्रह्म ने सोचा या इच्छा की, "मैं एक हूँ, मैं अनेक हो जाऊँ!" इस तरह संकल्प द्वारा ब्रह्म ने स्वयं को अनेक के रूप में प्रक्षेपित किया। वेदांत कहता है कि इस दुनिया में हम जो कुछ भी देखते हैं, यह उस पर लागू होता है। प्रतीत होने वाली विविधता के पीछे एकता है। ब्रह्म ही सब कुछ बन गया है– आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी। सामान्य जीवन में भी हम देखते हैं कि सब जन्म के बाद धीरे धीरे विस्तार पाते हैं– शरीर, आकार, ज्ञान, क्षमता सबका और अंततः वे सभी पुनः क्षय होते हुए पुनः विलीन हो जाते हैं। शरीर को पंचतत्व से रचित कहा गया है और अंतिम संस्कार के बाद कहते हैं– देह पंचतत्व में विलीन हो गई। जिन तत्वों से सृजित उन्हीं में विलीन।

आगे अद्वैत वेदान्त यह भी कहता है– एकोहं द्वितीयो नास्ति। न भूतो न भविष्यति। यह भी 'एक और अनेक' का ही विस्तार है, व्याख्या है। जैसे कि पदार्थ नष्ट नहीं होता, उसके रूप परिवर्तित होते हैं। यही शाश्वत है।

व्यष्टि-समष्टि, आत्मा-परमात्मा के एक-अनेक संबंध को समझने का प्रयास की आत्म (स्वयं) से ऊपर का ज्ञान 'अध्यात्म' है। यह सामान्य धर्मों, कानूनों से ऊपर भिन्न और सबको समाहित करने वाला है। इसमें भिन्नता हो सकती है लेकिन किसी प्रकार का भौतिक संघर्ष नहीं है। इसलिए जैसे कि कहते हैं– हाथी के पाँव में सबका पाँव। वैसे ही दर्शन सभी जीवों विशेषरूप से जिज्ञासु मानव की समस्त अनादि-अनंत जिज्ञासाओं, प्रश्नों-उत्तरों, परीक्षणों-परिणामों का समाहार है।

यही उसका सच है कि वह एकता-अनेकता के बीच चिंतन, मनन और जीवनयापन करता है। इसीमें अपने सभी विमर्शों को खोजता और समाधान पाता है। इसीको उसका अस्तित्व अर्पित होता है। यही सच्चा धर्म है, सत्य है, ज्ञान है। इसे समझे बिना निस्तार नहीं है। इसीलिए सच्चे ज्ञानियों की दुनिया में सबके लिए जगह है। यह सोच ही ईश्वरत्व का साक्षात है।

जब इस एकात्मता, अद्वैत की अनुभूति-ज्ञान हो जातें हैं तब भय समाप्त हो जाता है।

कभी रात को आँख खुल जाए। कोई आवाज, खड़खड़ हो तो भय होता है। फिर साहस करके पूछते हैं– कौन है?

किसी परिचित का उत्तर मिलता है– मैं हूँ। हम जान जाते हैं कि कोई अपना ही है तो हमारा भय दूर हो जाता है।

तभी यह भी कहा गया है– द्वितीयो भयं। जब दूसरे, पराए की अनुभूति होती है तो भय होता है। इसीलिए यह भी कहा जाता है कि ऋषियों के आश्रम में विपरीत स्वभाव वाले जीव भी एक साथ विचरण करते हैं। सुशासन के लिए भी यही कहा जाता है कि अमुक राजा के राज्य में शेर और बकरी एक ही घाट पर पानी पीते थे। इसीलिए समता-न्याय सुशासन के मूलतत्व माने गए हैं।

ये समता-न्याय ही लोकतंत्र-गणतंत्र या इस विविधतापूर्ण सृष्टि के सहज संचालन स्वाभाविक सूत्र हैं। एक से बहुत होने पर भिन्नता अपरिहार्य है। फिर चाहे वह लोक हो, गण हो, परिवार हो। परिवार भी एक से अनेक होना है। उसमें भी भिन्न-भिन्न शक्ल, स्वभाव, आयु, विचार के सदस्यों का समाहार होता है। इसीका विस्तार है– वसुधैव कुटुम्बकं। जब कोई भिन्न जीव गाय, तोता, कुत्ता-बिल्ली आदि भी मनुष्य के साथ रहने लग जाते हैं तो वे परिवार के सदस्य हो जाते हैं, एक दूसरे को समझने लग जाते हैं, एक दूसरे के साथ-विछोह से सुखी-दुखी होते हैं। स्वाभाविक शत्रु माने जाने वाले जीव कुत्ता-बिल्ली का भी प्रेमपूर्ण साथ देखा गया है। कुतिया द्वारा बिल्ली, बाघिन के बच्चों को दूध पिलाने, पालने के उदाहरण मिल जाते हैं। यही उस 'एक' के 'अनेक' होकर भी 'एक' होने का प्रमाण है। इसको पहचानना ही सत्य का ज्ञान है, ईश्वर की अनुभूति है। यही आनंद है।

मोमिन की इन पंक्तियों से क्या समझ में आता है–

तुम मेरे पास होते हो गोया
जब कोई दूसरा नहीं होता

मतलब जब द्वैत, दूसरे, पराए का भाव नहीं रहता उस समय हम ईश्वर के पास होते हैं।

क्या इस नितांत, नित्य भिन्न दिखाई देने वाली उस 'एक' से उत्पन्न 'बहु' वाली सृष्टि में प्रेम और अभय के साथ रहने के लिए इस मंत्र को, इस सत्य को समझने की जरूरत को स्वीकार न करें?

इसके बिना कोई चारा नहीं है।

शांति-प्रेम से जियें या लड़-लड़ कर एक दूसरे से कुढ़ते हुए घृणा करते हुए मर जाएँ।

मरना तो वैसे भी ध्रुव है। जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः।
सजन रे झूठ मत बोलो ख़ुदा के पास जाना है।

यदि आपको किसी कुंठा के कारण खुदा के पास जाने से परहेज है हालाँकि उसे तो नहीं है तो ईश्वर के पास चले जाएँ। जाना तो पड़ेगा।

अध्यात्म और अद्वैत की भूमि भारत के समता-न्याय से विभूषित गणतंत्र की अमृत बेला में इस बात पर विचार करना बनता तो है।

–रमेश जोशी

विशिष्ट आलेख

संस्कृति का स्वरूप

वासुदेवशरण अग्रवाल

संस्कृति की प्रवृत्ति महाफल देनेवाली होती है। सांस्कृतिक कार्य के छोटे से बीज से बहुत फल देनेवाला बड़ा वृक्ष बन जाता है। सांस्कृतिक कार्य कल्पवृक्ष की तरह फलदायी होते हैं। अपने ही जीवन की उन्नति, विकास और आनंद के लिए हमें अपनी संस्कृति की सुध लेनी चाहिए। आर्थिक कार्यक्रम जितने आवश्यक है, उनसे कम महत्त्व संस्कृति संबंधी कार्यों का नहीं है। दोनों एक ही रथ के दो पहिए हैं, एक दूसरे के पूरक हैं। एक के बिना दूसरे की कुशल नहीं रहती। जो उन्नत देश हैं, वे दोनों कार्य एक साथ संभालते हैं। वस्तुतः उन्नति करने का यही एक मार्ग है। मन को भुलाकर केवल शरीर की रक्षा पर्याप्त नहीं है। संस्कृति मनुष्य के भूत, वर्तमान और भावी जीवन का सर्वांगपूर्ण प्रकार है। हमारे जीवन का ढंग हमारी संस्कृति है। संस्कृति हवा में नहीं रहती, उसका मूर्तिमान रूप होता है। जीवन के नानाविध रूपों का समुदाय ही संस्कृति है। जब विधाता ने सृष्टि बनाई, तो पृथ्वी और आकाश के बीच विशाल अंतराल नाना रूपों से भरने लगा। सूर्य, चंद्र, तारे, मेघ, षड्ऋतु, उषा, संध्या आदि अनेक प्रकार के रूप हमारे आकाश में भर गए। ये देवशिल्प थे। देवशिल्पों से प्रकृति की संस्कृति भुवनों में व्याप्त हुई। इसी प्रकार मानवी जीवन के उषाकाल की हम कल्पना करें। उसका आकाश मानवीय शिल्प के रूपों से भरता गया। इस प्रयत्न में सहस्रों वर्ष लगे। यही संस्कृति का विकास और परिवर्तन है। जितना भी जीवन का ठाट है, उसकी सृष्टि मनुष्य के मन प्राण और शरीर के दीर्घकालीन प्रयत्नों के फलस्वरूप हुई है। मनुष्य-जीवन रुकता नहीं, पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ता है। संस्कृति के रूपों का उत्तराधिकार भी हमारे साथ चलता है। धर्म, दर्शन, साहित्य, कला उसी के अंग हैं।

संसार में देश भेद से अनेक प्रकार के मनुष्य हैं। उनकी संस्कृतियाँ भी अनेक हैं। यहाँ नानात्व अनिवार्य है, वह मानवीय जीवन का झंझट नहीं, उसकी सजावट है। किंतु देश और काल की सीमा से बँधे हुए हमारा घनिष्ठ परिचय या संबंध किसी एक संस्कृति से ही संभव है। वही हमारी आत्मा और मन में रमी हुई होती है और उनका संस्कार करती है। यों तो संसार में अनेक स्त्रियाँ और पुरुष हैं, पर एक जन्म में जो हमारे माता-पिता बनते हैं, उन्हीं के गुण हम में आते हैं और उन्हें ही हम अपनाते हैं। ऐसे ही संस्कृति का संबंध है, वह सच्चे अर्थों में हमारी धात्री होती है। इस दृष्टि से संस्कृति हमारे मन का मन, प्राणों का प्राण और शरीर का शरीर होती है। इसका यह अर्थ नहीं कि अपने विचारों को किसी प्रकार संकुचित कर लेते हैं। सच तो यह है कि जितना अधिक हम एक संस्कृति के मर्म को अपनाते हैं, उतने ही ऊँचे उठकर हमारा व्यक्तित्व संसार के दूसरे मनुष्यों, धर्मों, विचारधाराओं और संस्कृतियों से मिलने और उन्हें जानने के लिए समर्थ और अभिलाषी बनता है। अपने केंद्र की उन्नति बाह्य विकास की नींव है। कहते हैं कि घर खीर तो बाहर भी खीर; घर में एकादशी तो बाहर भी सब सूना। एक संस्कृति में जब हमारी निष्ठा पक्की होती है, तो हमारे मन की परिधि विस्तृत हो जाती है, हमारी उदारता का भंडार भर जाता है। संस्कृति जीवन के लिए परम आवश्यक है। राजनीति की साधना उसका केवल एक अंग है। संस्कृति राजनीति और अर्थशास्त्र दोनों को अपने में पचाकर इन दोनों से विस्तृत मानव मन को जन्म देती है। राजनीति में स्थायी रक्तसंचार केवल संस्कृति के प्रचार, ज्ञान और साधना से संभव है। संस्कृति जीवन के वृक्ष का संवर्धन करनेवाला रस है। राजनीति के क्षेत्र में तो उसके इने-गिने पत्ते ही देखने में आते हैं। अथवा यों कहें कि राजनीति केवल पथ की साधना है, संस्कृति उस पथ का साध्य है।

भारतीय राष्ट्र अब स्वतंत्र हुआ है। इसका अर्थ यह है कि हमें अपनी इच्छा के अनुसार अपना जीवन ढालने का अवसर प्राप्त हुआ है। जीवन का जो नवीन रूप हमें प्राप्त होगा, वह अकस्मात् अपने आप आ गिरनेवाला नहीं है। उसके लिए जान बूझकर निश्चित विधि से हमें प्रयत्न करना होगा। राष्ट्र संवर्धन का सबसे प्रबल कार्य संस्कृति की साधना है। उसके लिए बुद्धिपूर्वक प्रयत्न करना आवश्यक है। देश के प्रत्येक भाग में इस प्रकार के प्रयत्न आवश्यक हैं। इस देश की संस्कृति की धारा अति प्राचीन काल से बहती चली आई है। हम उसका सम्मान करते हैं, किंतु उसके प्राणवंत तत्व को अपनाकर ही हम आगे बढ़ सकते हैं। उसका जो जड़ भाग है, उस गुरुतर बोझ को यदि हम ढोना चाहें, तो हमारी जाति में अड़चन उत्पन्न होगी। निरंतर गति मानव जीवन का वरदान है। व्यक्ति हो या राष्ट्र, जो एक पड़ाव पर टिका रहता है। उसका जीवन ढलने लगता है। इसलिए 'चरैवेति चरैवेति' की धुन जब तक राष्ट्र के रथ-चक्रों में गूँजती रहती है, तभी तक प्रगति और उन्नति होती है, अन्यथा प्रकाश और प्राणवायु के कपाट बंद हो जाते हैं और जीवन रुँध जाता है। हमें जागरूक रहना चाहिए; ऐसा नहीं कि हमारा मन परकोटा खींचकर आत्मरक्षा की साधना करने लगे।

पूर्व और नूतन का जहाँ मेल होता है, वही उच्च संस्कृति की उपजाऊ भूमि है। ऋग्वेद के पहले ही सूक्त में कहा गया है कि नए और पुराने ऋषि दोनों ही ज्ञानरूपी अग्नि की उपासना करते हैं। यही अमर सत्य है। कालिदास ने गुप्तकाल की स्वर्णयुगीन भावना को प्रकट करते हुए लिखा है कि जो पुराना है, वह केवल इसी कारण अच्छा नहीं माना जा सकता, और जो नया है, उसका भी इसलिए तिरस्कार करना उचित नहीं। बुद्धिमान दोनों को कसौटी पर कसकर किसी एक को अपनाते हैं। जो मूढ़ हैं, उनके पास घर की बुद्धि का टोटा होने के कारण वे दूसरों के भुलावे में आ जाते हैं। गुप्त-युग के ही दूसरे महान् विद्वान श्री सिद्धसेन दिवाकर ने कुछ इसी प्रकार के उद्गार प्रकट किए थे—"जो पुरातन काल था, वह मर चुका। वह दूसरों का

था, आज का जन यदि उसको पकड़कर बैठेगा, तो वह भी पुरातन की तरह ही मृत हो जाएगा। पुराने समय के जो विचार हैं, वे तो उनके प्रकार के हैं। कौन ऐसा है, जो भली प्रकार उनकी परीक्षा किए बिना अपने मन को उधर जाने देगा।"

'जनोऽयमन्यस्य मृतः पुरातनः पुरातनैरेव समो भविष्यति ।
पुरातनेष्वित्यनवस्थितेषु कः पुरातनोक्तान्यपरीक्ष्य रोचयेत्॥'

अथवा 'जो स्वयं विचार करने में आलसी है, वह किसी निश्चय पर नहीं पहुँच पाता। जिसके मन में सही निश्चय करने की बुद्धि है, उसी के विचार प्रसन्न और साफ़-सुथरे रहते हैं। जो यह सोचता है कि पहले आचार्य और धर्मगुरु जो कह गए, सब सच्चा है, उनकी सब बात सफ़ल है और मेरी बुद्धि या विचारशक्ति टुटपुँजिया है, ऐसा बाबावाक्यं प्रमाणम् के ढंग पर सोचनेवाला मनुष्य केवल आत्महनन का मार्ग अपनाता है'—

'विनिश्चयं नैति यथा यथालसस्तथा निश्चितवान् प्रसीदति ।
अवन्ध्यवाक्या गुरवोऽहमल्पधीरिति व्यवस्यन् स्ववधाय धावति ॥'

मनुष्य के चरित्र मनुष्यों के कारण स्वयं मनुष्यों द्वारा ही निश्चित किए गए हैं। यदि कोई बुद्धि का आलसी या विचारों का दरिद्री बनकर हाथ में पतवार लेता है, तो वह कभी उन चरित्रों का पार नहीं पा सकता, जो अथाह हैं और जिनका अंत नहीं जिस प्रकार हम अपने मत को पक्का समझते हैं, वैसे ही दूसरे का मत भी तो हो सकता है। दोनों में से किसकी बात कही जाए? इसलिए दुराग्रह को छोड़कर परीक्षा की कसौटी पर प्रत्येक वस्तु को कसकर देखना चाहिए' गुप्तकालीन संस्कृति के ये गूँजते हुए स्वर प्रगति, उत्साह, नवीन पथ संशोधन और भारमुक्त मन की सूचना देते हैं। राष्ट्र के अर्वाचीन जीवन में भी इसी प्रकार का दृष्टिकोण हमें ग्रहण करना आवश्यक है। कुषाण-युग के आरंभ की मानसिक स्थिति का परिचय देते हुए महाकवि अश्वघोष ने तो यहाँ तक कहा था कि राजा और ऋषियों के उन आदर्श चरित्रों को, जिन्हें पिता अपने जीवन में पूरा नहीं कर सके थे, उनके पुत्रों ने कर दिखाया—

राज्ञाम् ऋषीणाम् चरितानि तानि कृतानि पुत्रैरकृतानि पूर्वैः ।

नए और पुराने के संघर्ष में इस प्रकार का सुलझा हुआ और साहसपूर्ण दृष्टिकोण रखना आवश्यक है। इससे प्रगति का मार्ग खुला रहता है, अन्यथा भूतकाल कंठ में पड़े खटखटे की तरह बारबार टकराकर हमारी हड्डियों को तोड़ता रहता है। भारतवर्ष जैसे देश के लिए यह और भी आवश्यक है कि वह भूतकाल की जड़पूजा में फँसकर उसी को संस्कृति का अंग न मानने लगे। भूतकाल की रूढ़ियों से ऊपर उठकर उसके नित्य अर्थ को ग्रहण करना चाहिए। आत्मा को प्रकाश से भर देनेवाली उसकी स्फूर्ति और प्रेरणा स्वीकार करके आगे बढ़ना चाहिए। जब कर्म की सिद्धि पर मनुष्य का ध्यान जाता है, तब वह अनेक दोषों से बच जाता है। जब कर्म से भयभीत व्यक्ति केवल विचारों की उलझन में फँस जाता है, तब वह जीवन की नई पद्धति या संस्कृति को जन्म नहीं दे पाता। अतएव आवश्यक है कि पूर्वकालीन संस्कृति के जो निर्माणकारी तत्व हैं, उन्हें लेकर हम कर्म में लगें और नई वस्तु का निर्माण करें।

इसी प्रकार भूतकाल वर्तमान का खाद बनकर भविष्य के लिए विशेष उपयोगी बनता है। भविष्य का विरोध करके पदे-पदे उससे जूझने में और उसकी गति कुंठित करने में भूतकाल का जब उपयोग किया जाता है, तब नए और पुराने के बीच एक खाई बन जाती है। और समाज में दो प्रकार की विचारधाराएँ फैलकर संघर्ष को जन्म देती हैं। हमें अपने भूतकालीन साहित्य में आत्मत्याग और मानव-सेवा का आदर्श ग्रहण करना होगा। अपनी कला में से अध्यात्म भावों की प्रतिष्ठा और सौंदर्य-विधान के अनेक रूपों और अभिप्रायों को पुनः स्वीकार करना होगा। अपने दार्शनिक विचारों में से उस दृष्टिकोण को अपनाना होगा, जो समन्वय, मेल-जोल, समवाय और संप्रीति के जीवन-मंत्र की शिक्षा देता है, जो विश्व के भावी संबंधों का एकमात्र नियामक दृष्टिकोण कहा जा सकता है। अपने उच्चाशयवाले धार्मिक सिद्धांतों को मथकर उनका सार ग्रहण करना होगा। धर्म का अर्थ संप्रदाय या मतविशेष का आग्रह नहीं है। रूढ़ियाँ रुचि-भेद से भिन्न होती रही हैं और होती रहेंगी। धर्म का मथा हुआ सार है प्रयत्नपूर्वक अपने आपको ऊँचा बनाना। जीवन को उठाने वाले जो नियम हैं, वे जब आत्मा में बसने लगते हैं, तभी धर्म का सच्चा आरंभ मानना चाहिए। साहित्य, कला, दर्शन और धर्म से जो मूल्यवान सामग्री हमें मिल सकती है, उसे नए जीवन के लिए ग्रहण करना, यही सांस्कृतिक कर्म की उचित शिक्षा और सच्ची उपयोगिता है।

श्रद्धांजलि

विगत शताब्दी के अंतिम दशक में अपने दीर्घ अकादमिक और अर्थशास्त्रीय अनुभव के बल पर देश की अर्थव्यवस्था को चामत्कारिक रूप से सँभालने वाले, मानवीय गुणों और सहज विनम्रता के प्रतीक, विश्व में समादृत अर्थशास्त्री, भारत के **पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह** का 92 वर्ष की आयु में 26 दिसंबर 2024 की रात्रि को निधन। ॐ शांति।

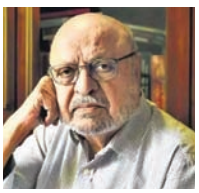

भारतीय सिनेमा में एक बड़ी हस्ती और समानांतर सिनेमा आंदोलन के अगुआ, दादा साहब फाल्के पुरस्कार और 18 राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार से सम्मानित **पद्म भूषण श्याम बेनेगल** का 90 वर्ष की आयु में निधन। विनम्र श्रद्धांजलि।

पद्मविभूषण, पाँच ग्रेमी अवॉर्ड विजेता, विश्व प्रसिद्ध तबला वादक **उस्ताद जाकिर हुसैन** का 73 वर्ष की आयु में अमरीका में निधन।

हजारों वृक्ष लगाने और उनका संरक्षण करने वाली कर्नाटक की 'वृक्ष माता' के नाम से विख्यात आदिवासी हलक्की समुदाय की पद्मश्री एवं इंदिरा वृक्ष मित्र सम्मान से विभूषित **तुलसी गौड़ा** का 86 वर्ष की आयु में निधन।

बुनियाद के लिए बुनियादी शिक्षा

धर्मपाल महेंद्र जैन

dharmtoronto@gmail.com

कैनेडियन शिक्षा पद्धति से मुझे निरंतर रूबरू कराने का श्रेय मैं अपनी नातिन वान्या को देता हूँ। उसके जन्म के पहले दिन से मैं उसके साथ रहा और उसके पल-पल बड़े होने की प्रक्रिया में जीवन के अपरिमित आनंद को महसूसता रहा। उसके आठ महीने की होने पर उसकी मम्मी काम पर लौटने वाली थी। अब मुझे वान्या के साथ प्रतिदिन आठ घंटे साथ रहना था। देखभाल करना तो एक बहाना था, असल में मुझे अपना सारा ज्ञान उसे दे देने की जल्दी थी। देखते-देखते वह चंट ढाई साल की हो गई। अब वह सॉकर बॉल (फूटबॉल) को 'किक' मार सकती थी, खरगोश को पकड़ने दौड़ सकती थी और हुड़-हुड़ दबंग पर थिरक सकती थी। 'प्री-स्कूल' या 'प्री-किंडरगार्टन' के लिए ये अनिवार्य योग्यताएँ नहीं थीं, और न ही ये संस्थाएँ सार्वजनिक स्कूल प्रणाली का हिस्सा थीं। लाइसेंसधारी बालवाड़ियाँ इतना ही चाहती थीं कि बच्चा 'पॉटी ट्रेंड' यानि 'सुसु' करने और 'पू' करने के पहले शिक्षक को बता दे कि उसकी अगली योजना क्या है।

पहले कुछ दिन वह बालवाड़ी में जाना नहीं चाहती थी, पर दूसरे सप्ताह में उसे वहाँ जाने में मजा आने लगा था। अब उसके हमउम्र साथियों ने क्लास में रोना बंद कर दिया था। उसे अपने गर्म कपड़े और जूते उतार कर 'क्लोजेट' में जमाने में चोरी का डर नही लगता था। सितंबर की गुनगुनी धूप में एक डोर को थामे लगभग बीस बच्चे कतार मे चलते। एक शिक्षक कतार के आगे, एक पीछे और बीच में डोर थामने का अनुशासन मानते बच्चे। वान्या उस कतार में हँसती-फुदकती होती। 'प्री-स्कूल' में वह फूलों तथा पत्तियों के रंग पहचानने लगी थी। वह लाल रंग के 'प्लेडो' (खेलने के लिए विशेष रूप से गूँथा आटा) में पीले रंग का 'प्लेडो' गूँथ कर नारंगी रंग बना सकती थी। अब वह जानती थी कि नीले रंग में पीला रंग मिलाने से हरा रंग बनता है। वह कई रंगों को पहचानने और प्राथमिक रंग मिश्रित कर नए रंग बनाना सीख गई थी। ढाई-तीन साल के बच्चे के लिए 'प्री-स्कूल' में यह पहला और पंसदीदा सबक था। इन्हीं दिनों कैनडा के राष्ट्रगीत 'ओ कैनडा अवर होम एंड नेटिव लैंड' की पहली पंक्ति उसे याद होने लग गई थी। कहीं भी वह राष्ट्रगीत सुनती तो खड़ी हो जाती और उसके शिक्षक के अंदाज में हम सबको खड़े होने का आदेश देती।

'क्या और कैसे' की जिज्ञासा बनाना

'प्री-स्कूल' में शिक्षक न्यूनतम वांछित ध्यान रखते और बच्चे को उसकी मर्जी से करने देते। मुझे उत्कंठा रहती कि वान्या क्या नया सीखेगी। हम उसे घर पर ए, बी, सी, डी, अंक आदि सिखा रहे थे पर स्कूल को अक्षर देखे ज्ञान देने की जल्दी नहीं थी। उनका उद्देश्य होता था बच्चे दोस्त बनाना सीखें, एक-दूसरे की टीम बनाकर सहयोग करें और अपनी चीजें साझा करना सीखें। वान्या के पास कागज पर बिंदु-बिंदु से बनी कुछ आकृतियाँ होतीं और किताब के पन्नों पर उन आकृतियों के लुभावने स्टीकर होते। वह कोरी आकृति के हिसाब का स्टीकर चुनती, उसे निकालती और अपने पन्ने पर चिपकता देती। मैं सीख रहा था कि बच्चे के लिए अक्षर ज्ञान से पहले अपने आसपास की चीजों के मिश्रित रंग, लंबाई-चौड़ाई आदि का सही अनुमान लगाना जरूरी था। एक दिन मैंने देखा वह लकड़ी के तीन रंगीन टुकड़ों की पहेली दूसरे बच्चे के साथ खेल रही थी। उसने अमेरिका, कैनेडा और मैक्सिको के लकड़ी के टुकड़े उठाए और एक दूसरे लगा दिए। वह उत्तरी अमेरिका का नक्शा बन गया था। फिर कभी मैंने उसे लकड़ी के तेरह टुकड़ों की पहेली बड़ी टीम के साथ हल करते देखा। इसमें वह कैनेडा के प्रांतों और संघ शासित क्षेत्रों को जमा रही थी। धीरे-धीरे वह पचास-साठ टुकड़ों को उनके सही स्थान पर जमाना सीख गई थी। खेल-खेल में उसने भूगोल, ग्रहों, पशु-पक्षियों और मनुष्य के प्रमुख अंगों को अपने दिमाग में बसा लिया था। बिंदु-बिंदु बनी आकृतियों में स्कैच पेन से बेतरतीब रंग भरते हुए वह चित्रकारी सीख रही थी। 'प्री-स्कूल' से ही बच्चे को शिक्षक द्वारा सिखाना कम था। बच्चा किसी को कुछ करते देखता और स्वतः करने लग जाता। **शिक्षा का ध्येय 'क्या और कैसे' की जिज्ञासा बनाना तथा 'देखो और सीखो' की प्रवृत्ति बनाना था।**

(फोटो क्रेडिट – गौतम अरोड़ा)

बच्चे सप्ताह में एक बार कार्टून फिल्म देखते और लोकप्रिय शिशुगीत, क्रिसमस जैसे उत्सव आदि का गीत-संगीत सुनते। वहाँ उसके लंच और 'नैप' का समत तय था। सब बच्चे अपने निर्धारित बिस्तरे पर दोपहर की झपकी लेते और उठने के बाद बाहर की मैदानी गतिविधियों के लिए तैयार हो जाते। दिसंबर में बर्फबारी शुरू हो गई थी। शून्य से पंद्रह डिग्री सेल्सियस तापमान तक के साफ मौसम में बच्चे स्कूल के मैदानों में खेलते, छोटी-छोटी फिसलपट्टियों की सीढ़ियाँ चढ़ते और फिसलते। छोटी बाल्टियों में खोदकर रेत भरते

और घरोंदे बनाते। बचपन से ही ठंडे तापमान में रहना उनके शरीर को इसका अभयस्त बना देता। 'प्री-स्कूल' के वर्षों में कोई ऐकडेमिक पाठ्यक्रम नहीं था, पर प्री-स्कूल ने उसे जिज्ञासु बना दिया था। वह हर नई चीज के बारे में सवाल करने लगी थी। वह किसी भी चीज को छूने के पहले पूछती पर मुँह में कतई नहीं डालती। गली के कोने पर 'स्टॉप' चिह्न पर जा कर ठहरती और तब तक आगे नहीं बढ़ती जब तक कोई बड़ा उसके साथ नहीं होता।

किंडरगॉर्टन के दो साल

मेरी प्रतीक्षा अब समाप्त होने वाली थी। अब वह प्लास्टिक के खिलौने लैपटॉप पर अक्षरों को पहचानता सीख रही थी। वह जिस अक्षर को दबाती उस अक्षर का नाम गूंजता – ए, बी...। वह गर्व से बताती कि उसके नाम में 'ए' दो बार आता है। किंडरगार्टन के पहले साल में वह अपना, मम्मी-पापा, नाना-नानी, दादा-दादी का नाम लिखना सीख गई। हालांकि नौ महीने की उम्र में ज्ञान पंचमी के दिन उसे परंपरा से मैंने जो 'ॐ' लिखना सिखाया था, वह लैपटॉप के कीबोर्ड पर नहीं था। उसके दिमाग में अक्षरों और अंकों की जो छवि खिलौने लैपटॉप के कीबोर्ड को देखते हुए बनी थी, वह उन्हें कागज पर उतार सकती थी। उसके पास अपनी पाँच-छः किताबें थी, हमारे दो-ढाई सौ पेजों जितनी मोटी। पर उनमें दस-बारह पन्ने होते थे मोटे गत्ते के, टिकाऊ, रंग-बिरंगे, कार्टून वाले और दो-चार शब्दों वाले। वान्या को अपनी सारी किताबें याद हो गई थीं। वह उन शब्दों को पहचानती थी। उसे रोजमर्रा काम आने वाले तीस-चालीस वाक्य याद हो गए थे और आवश्यकतानुसार वह उनसे अपने मौलिक वाक्य बना लेती थी। किंडरगार्टन के दिनों में ही अन्य बच्चों की तरह उसने तैरना, बर्फ में स्केटिंग, स्कीईंग और स्नोबोर्डिंग करना सीख लिया। वह मुझे गच्चा देकर मुझसे फुटबॉल छीन सकती थी और चेस में मुझे शह और मात दे सकती थी। ताश के पतों की रंगमिलाई और अंक मिलान खेलने से आगे वह 'सिक्वेंस' (क्रम) बना सकती थी, पर अद्‌भूत बात यह थी कि वह इस 'ज्ञान' को अपनी अन्य दैनिक गतिविधियों में सहज ही काम में लेने लगी थी। 'रटंत विद्‌या' और 'तर्क विद्या' का यह अंतर बचपन में ही पश्चिमी देशों में पढ़े बच्चों को नया सोचने के लिए तैयार कर देता।

किंडरगार्टन के दो वर्ष पूर्ण होने पर उसके 'ग्रेज्यूएशन' समारोह में हम शामिल हुए। मेरा पहला 'ग्रेज्यूएशन' समारोह जब हुआ था तब मैं बी.एससी. कर चुका था। यहाँ तो किंडरगार्टन, बुनियादी स्कूल, माध्यमिक स्कूल, हाईस्कूल जैसे हर स्तर को पास करने पर 'ग्रेज्यूएशन' समारोह होते!

पहली कक्षा और उसके कौशल

आमतौर पर बहुत छोटी उम्र से ही बच्चे माता-पिता से अलग अपने कमरे में स्वतंत्र रूप से सोना शुरू कर देते हैं। निर्धारित समय (सामान्यत: रात के 9 बजे) पर बच्चे सोने चले जाते हैं। उसके पहले माता-पिता बच्चे के साथ उनकी चहेती किताब पढ़ते हैं। किताब पढ़ने की यह प्रवृत्ति बच्चे में बचपन से ही स्थायी होने लगती है। माता-पिता के साथ किताबें पढ़ते हुए कोई औसत बच्चा पहली कक्षा में छह-सात सौ शब्द समझने लग जाता है और उनके विवेकपूर्ण उपयोग से अपने भाव प्रकट करना सीख जाता है। एक दिन वान्या मुझे कहानी सुनाने लगी। उसकी खुद की कल्पना से बनी कहानी। उसमें राजा-रानी नहीं थे पर 'सुपरमैन' था, जो अन्य ग्रहों से आए 'एलियंस' से धरती की रक्षा कर रहा था। मैं विस्मित रह गया उसकी कल्पनाओं से। वान्या ने बताया कि उनकी कक्षा में एक 'स्टोरी टेलर' (कथाकार) आए थे। वे बच्चों से बात करते-करते उनके सुझाए गए पात्र लेते और अपनी कहानी बढ़ाते जाते। इस तरह वह भी अपनी कहानियाँ कहने लग गई। फिर एक दिन वह स्कूल से छोटा-सा गमला लेकर आई। उस दिन उनकी कक्षा में 'साइंटिस्ट' आए थे। उन्होंने बताया कि बीज कैसा छोटा-सा होता है और उनसे पौधे कैसे उगते हैं। उन्होंने सब बच्चों को एक-एक पौधा भेंट दिया और बताया कि वे अपने घर में कहाँ रखे और उसमें हर दिन थोड़ा-थोड़ा पानी दे। वान्या ने कहा नाना, इस पर फूल आएँगे और 'फादर्स डे' पर वह मुझे और उसके पापा को, उसके उगाए फूल देगी।

वह पहली कक्षा से दूसरी कक्षा में जाने वाली थी। उनकी स्कूल में पहली कक्षा के बच्चे 'यंग आथर्स डे' मना रहे थे। मैं और हंसा उसमें शामिल हुए। वान्या ने एक पन्ने को फोल्ड कर चार पन्ने की किताब लिखी थी। किताब का नाम था 'माय फैमिली'। उस हॉल में करीब चालीस लोग थे, बच्चों के मम्मी-पापा, नाना-नानी, दादा-दादी आदि। वे चार-छः लोगों के छोटे-छोटे समूहों में बैठे थे। क्लास के सभी बच्चे कतारबद्ध आए। हम सब लोगों ने तालियाँ बजा कर उनका स्वागत किया। बच्चे अपने क्रम से हर समूह में जाते और अपनी किताब बुजुर्ग पाठकों को बताते और उसे पढ़ते। वान्या हमारे पास के समूह में अपनी प्रस्तुति दे रही थी। 'माय नेम इज वान्या। माय पापाज़ नेम इज़ नवनीत। माय मम्मा इज कृति। माय ब्रदर्स नेम इज यविन। आय कॉल हिम छोटू। आय लव माय फैमिली।' श्रोतागण वान्या और अन्य बच्चों की प्रस्तुति, अदा, उच्चारण और आत्मविश्वास पर उन्हें अंक और कमेंट्स दे रहे थे। मैं वान्या और अन्य बच्चों के अच्छे लेखक बनने की शुरूआत देख रहा था। आगामी कक्षाओं में उनकी लिखी किताबों में पन्ने, शब्द और रेखांकन बढ़ते गए। शिशुओं को पढ़ाने में उन पर बोझ जैसा कुछ नहीं था, सब खेल-खेल में हो रहा था।

विश्वा के सुधी और जिज्ञासु पाठकों के लिए निःशुल्क पढ़ सकने के लिए लिंक

1. हिन्दी नवनीत

navneethindi.com

2. चेतना स्रोत

(छंदबद्ध कविता की परंपरा की वाहक पत्रिका)

http://pdf.ac/33phEg

पिता के पत्र : पुत्री के नाम

अनुवाद – प्रेमचंद

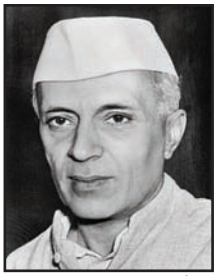

पं. जवाहरलाल नेहरू

27. आर्यों का हिन्दुस्तान में आना

अब तक हमने बहुत ही पुराने जमाने का हाल लिखा है। अब हम यह देखना चाहते हैं कि आदमी ने कैसे तरक्की की और क्या-क्या काम किए। उस पुराने जमाने को इतिहास के पहले का जमाना कहते हैं, क्योंकि उस जमाने का हमारे पास कोई सच्चा इतिहास नहीं है। हमें बहुत कुछ अंदाज से काम लेना पड़ता है। अब हम इतिहास के शुरू में पहुँच गए हैं।

पहले हम यह देखेंगे कि हिन्दुस्तान में कौन-कौन-सी बातें हुईं। हम पहले ही देख चुके हैं कि बहुत पुराने जमाने में मिस्र की तरह हिन्दुस्तान में भी सभ्यता फैली हुई थी। रोजगार होता था और यहाँ के जहाज हिन्दुस्तानी चीजों को मिस्र, मेसोपोटैमिया और दूसरे देशों को ले जाते थे। उस जमाने में हिन्दुस्तान के रहने वाले द्रविड़ कहलाते थे। ये वही लोग हैं जिनकी संतान आजकल दक्षिणी हिन्दुस्तान में मद्रास के आसपास रहती हैं।

उन द्रविड़ों पर आर्यों ने उत्तर से आ कर हमला किया, उस जमाने में मध्य एशिया में बेशुमार आर्य रहते होंगे। मगर वहाँ सब का गुजारा न हो सकता था इसलिए वे दूसरे मुल्कों में फैल गए। बहुत-से ईरान चले गए और बहुत-से यूनान तक और उससे भी बहुत पश्चिम तक निकल गए। हिन्दुस्तान में भी उनके दल के दल कश्मीर के पहाड़ों को पार करके आए। आर्य एक मजबूत लड़नेवाली जाति थी और उसने द्रविड़ों को भगा दिया। आर्यों के रेले पर रेले उत्तर-पश्चिम से हिन्दुस्तान में आए होंगे। पहले द्रविड़ों ने उन्हें रोका लेकिन जब उनकी तादाद बढ़ती ही गई तो वे द्रविड़ों के रोके न रुक सके। बहुत दिनों तक आर्य लोग उत्तर में सिर्फ अफगानिस्तान और पंजाब में रहे। तब वे और आगे बढ़े और उस हिस्से में आए जो अब संयुक्त प्रांत कहलाता है, जहाँ हम रहते हैं। वे इसी तरह बढ़ते-बढ़ते मध्य भारत के विंध्य पहाड़ तक चले गए। उस जमाने में इन पहाड़ों को पार करना मुश्किल था क्योंकि वहाँ घने जंगल थे। इसलिए एक मुद्दत तक आर्य लोग विंध्य पहाड़ के उत्तर तक ही रहे। बहुतों ने तो पहाड़ियों को पार कर लिया और दक्षिण में चले गए। लेकिन उनके झुंड के झुंड न जा सके इसलिए दक्षिण द्रविड़ों का ही देश बना रहा।

आर्यों के हिन्दुस्तान में आने का हाल बहुत दिलचस्प है। पुरानी संस्कृत किताबों में तुम्हें उनका बहुत-सा हाल मिलेगा। उनमें से बाज किताबें जैसे वेद उसी जमाने में लिखी गयी होंगी। ऋग्वेद सबसे पुराना वेद है और उससे तुम्हें कुछ अंदाजा हो सकता है कि उस वक्त आर्य लोग हिन्दुस्तान के किस हिस्से में आबाद थे। दूसरे वेदों से और पुराणों और दूसरी संस्कृत की पुरानी किताबों से मालूम होता है कि आर्य फैलते चले जा रहे थे। शायद इन पुरानी किताबों के बारे में तुम्हारी जानकारी बहुत कम है। जब तुम बड़ी होगी तो तुम्हें और बातें मालूम होंगी। लेकिन अब भी तुम्हें बहुत-सी कथाएँ मालूम हैं जो पुराणों से ली गई हैं। इसके बहुत दिनों बाद रामायण लिखी गई और उसके बाद महाभारत।

इन किताबों से हमें मालूम होता है कि जब आर्य लोग सिर्फ पंजाब और अफगानिस्तान में रहते थे, तो वे इस हिस्से को ब्रह्मावर्त कहते थे। अफगानिस्तान को उस समय गांधार कहते थे। तुम्हें महाभारत में गांधारी का नाम याद है। उसका यह नाम इसलिए पड़ा कि वह गांधार या अफगानिस्तान की रहनेवाली थी। अफगानिस्तान अब हिन्दुस्तान से अलग है लेकिन उस जमाने में दोनों एक थे।

अब आर्य लोग और नीचे, गंगा और जमुना के मैदानों में आए, तो उन्होंने उत्तरी हिन्दुस्तान का नाम आर्यावर्त रखा।

पुराने जमाने की दूसरी जातियों की तरह वे भी नदियों के किनारे पर बसे शहरों में ही आबाद हुए। काशी या बनारस, प्रयाग और बहुत से दूसरे शहर नदियों के ही किनारे हैं।

28. हिन्दुस्तान के आर्य कैसे थे?

आर्यों को हिन्दुस्तान आए बहुत जमाना हो गया। सबके सब तो एक साथ आए नहीं होंगे, उनकी फौजों पर फौजें, जाति पर जाति और कुटुम्ब पर कुटुम्ब सैकड़ों बरस तक आते रहे होंगे। सोचो कि वे किस तरह लंबे काफिलों में सफर करते हुए, गृहस्थी की सब चीजें गाड़ियों और जानवरों पर लादे हुए आए होंगे। वे आजकल के यात्रियों की तरह नहीं आए। वे फिर लौट कर जाने के लिए नहीं आए थे। वे यहाँ रहने के लिए या लड़ने और मर जाने के लिए आए थे। उनमें से ज्यादातर तो उत्तर-पश्चिम की पहाड़ियों को पार करके आए; लेकिन शायद कुछ लोग समुद्र से ईरान की खाड़ी होते हुए आए और अपने छोटे-छोटे जहाजों में सिंधू नदी तक चले गए।

ये आर्य कैसे थे? हमें उनके बारे में उनकी लिखी हुई किताबों से बहुत-सी बातें मालूम होती हैं। उनमें से कुछ किताबें, जैसे वेद, शायद दुनिया की सबसे पुरानी किताबों में से हैं। ऐसा मालूम होता है कि शुरू में वे लिखी नहीं गई थीं। उन्हें लोग जबानी याद करके दूसरों को सुनाते थे। वे ऐसी सुंदर संस्कृत में लिखी हुई हैं कि उनके गाने में मजा आता है। जिस आदमी का गला अच्छा हो और वह संस्कृत भी जानता हो उसके मुँह से वेदों का पाठ सुनने में अब भी

आनंद आता है। हिन्दू वेदों को बहुत पवित्र समझते हैं। लेकिन 'वेद' शब्द का मतलब क्या? इसका मतलब है 'ज्ञान' और वेदों में वह सब ज्ञान जमा कर दिया गया है जो उस जमाने के ऋषियों और मुनियों ने हासिल किया था। उस जमाने में रेलगाड़ियाँ, तार और सिनेमा न थे। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि उस जमाने के आदमी मूर्ख थे। कुछ लोगों का तो यह खयाल है कि पुराने जमाने में लोग जितने अक्लमंद होते थे, उतने अब नहीं होते। लेकिन चाहे वे ज्यादा अक्लमंद रहे हों या न रहे हों उन्होंने बड़े मार्के की किताबें लिखीं जो आज भी बड़े आदर से देखी जाती हैं। इसी से मालूम होता है पुराने जमाने के लोग कितने बड़े थे।

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि वेद पहले लिखे न गए थे। लोग उन्हें याद कर लिया करते थे और इस तरह वे एक पुश्त से दूसरी पुश्त तक पहुँचते गए। उस जमाने में लोगों की याद रखने की ताकत भी बहुत अच्छी रही होगी। हममें से अब कितने आदमी ऐसे हैं जो पूरी किताबें याद कर सकते हैं?

जिस जमाने में वेद लिखे गए उसे वेद का जमाना कहते हैं। पहला वेद ऋग्वेद हैं। इसमें वे भजन और गीत हैं जो पुराने आर्य गाया करते थे। वे लोग बहुत खुशमिजाज रहे होंगे, रूखे और उदास नहीं। बल्कि जोश और हौसले से भरे हुए। अपनी तरंग में वे अच्छे-अच्छे गीत बनाते थे और अपने देवताओं के सामने गाते थे।

उन्हें अपनी जाति और अपने आप पर बड़ा गरूर था। 'आर्य' शब्द के माने हैं 'शरीफ आदमी' या 'ऊँचे दरजे का आदमी'। और उन्हें आजाद रहना बहुत पसंद था। वे आजकल की हिन्दुस्तानी संतानों की तरह न थे जिनमें हिम्मत का नाम नहीं और न अपनी आजादी के खो जाने का रंज है। पुराने जमाने के आर्य मौत को गुलामी या बेइज्जती से अच्छा समझते थे।

वे लड़ाई के फन में बहुत होशियार थे। और कुछ-कुछ विज्ञान भी जानते थे। मगर खेती-बाड़ी का ज्ञान उन्हें बहुत अच्छा था। खेती की कद्र करना उनके लिए स्वाभाविक बात थी। और इसलिए जिन चीजों से खेती को फायदा होता था उनकी भी वे बहुत कद्र करते थे। बड़ी-बड़ी नदियों से उन्हें पानी मिलता था इसलिए वे उन्हें प्यार करते थे और उन्हें अपना दोस्त और उपकारी समझते थे। गाय और बैल से भी उन्हें अपनी खेती में और रोजमर्रा के कामों में बड़ी मदद मिलती थी, क्योंकि गाय दूध देती थी जिसे वे बड़े शौक से पीते थे। इसलिए वे इन जानवरों की बहुत हिफाजत करते थे और उनकी तारीफ के गीत गाते थे। उसके बहुत दिनों के बाद लोग यह तो भूल गए कि गाय की इतनी हिफाजत क्यों की जाती थी और उसकी पूजा करने लगे। भला सोचो तो इस पूजा से किसका क्या फायदा था। आर्यों को अपनी जाति का बड़ा घमंड था और इसलिए वे हिन्दुस्तान की दूसरी जातियों में मिल-जुल जाने से डरते थे। इसलिए उन्होंने ऐसे कायदे और कानून बनाए कि मिलावट न होने पाए। इसी वजह से आर्यों को दूसरी जातियों में विवाह करना मना था। बहुत दिनों के बाद इसी ने आजकल की जातियाँ पैदा कर दीं। अब तो यह रिवाज बिल्कुल ढोंग हो गया है। कुछ लोग दूसरों के साथ खाने या उन्हें छूने से भी डरते हैं। मगर यह बड़ी अच्छी बात है कि यह रिवाज कम होता जा रहा है।

29. रामायण और महाभारत

वेदों के जमानें के बाद काव्यों का जमाना आया। इसका यह नाम इसलिए पड़ा कि इसी जमानें में दो महाकाव्य, रामायण और महाभारत लिखे गए, जिनका हाल तुमने पढ़ा है। महाकाव्य पद्य की उस बड़ी पुस्तक को कहते हैं, जिसमें वीरों की कथा बयान की गई हो।

काव्यों के जमाने में आर्य लोग उत्तरी हिन्दुस्तान से विंध्य पहाड़ तक फैल गए थे। जैसा मैं तुमसे पहले कह चुका हूँ इस मुल्क को आर्यावर्त कहते थे। जिस सूबे को आज हम 'संयुक्त प्रदेश कहते हैं वह उस जमाने में मध्य प्रदेश कहलाता था, जिसका मतलब है बीच का मुल्क। बंगाल को बंग कहते थे।

यहाँ एक बड़े मजे की बात लिखता हूँ जिसे जान कर तुम खुश होगी। अगर तुम हिन्दुस्तान के नक्शे पर निगाह डालो और हिमालय और विंध्य पर्वत के बीच के हिस्से को देखो, जहाँ आर्यावर्त रहा होगा तो तुम्हें वह दूज के चाँद के आकार का मालूम होगा। इसीलिए आर्यावर्त को इंदु देश कहते थे। इंदु चाँद को कहते हैं।

आर्यों को दूज के चाँद से बहुत प्रेम था। वे इस शक्ल की सभी चीजों को पवित्र समझते थे। उनके कई शहर इसी शक्ल के थे जैसे बनारस। मालूम नहीं तुमने खयाल किया है या नहीं, कि इलाहाबाद में गंगा भी दूज के चाँद की-सी हो गई है।

यह तो तुम जानती ही हो कि रामायण में राम और सीता की कथा और लंका के राजा रावण के साथ उनकी लड़ाई का हाल बयान किया गया है। पहले इस कथा को वाल्मीकि ने संस्कृत में लिखा था। बाद को वही कथा बहुत-सी दूसरी भाषाओं में लिखी गई। इनमें तुलसीदास का हिन्दी में लिखा हुआ रामचरितमानस सबसे मशहूर है।

रामायण पढ़ने से मालूम होता है कि दक्खिनी हिन्दुस्तान के बंदरों ने रामचन्द्र की मदद की थी और हनुमान उनका बहादुर सरदार था। मुमकिन है कि रामायण की कथा आर्यों और दक्खिन के आदमियों की लड़ाई की कथा हो, जिनके राजा का नाम रावण रहा हो। रामायण में बहुत-सी सुंदर कथाएँ हैं; लेकिन यहाँ मैं उनका जिक्र न करूँगा, तुमको खुद उन कथाओं को पढ़ना चाहिए।

महाभारत इसके बहुत दिनों बाद लिखा गया। यह रामायण से बहुत बड़ा ग्रंथ है। यह आर्यों और दक्खिन के द्रविड़ों की लड़ाई की कथा नहीं; बल्कि आर्यों के आपस की लड़ाई की कथा है। लेकिन इस लड़ाई को छोड़ दो, तो भी यह बड़े ऊँचे दरजे की किताब है जिसके गहरे विचारों और सुंदर कथाओं को पढ़ कर आदमी दंग रह जाता है। सबसे बढ़ कर हम सबको इसलिए इससे प्रेम है कि इसमें वह अमूल्य ग्रन्थ रत्न है जिसे भगवद्गीता कहते हैं।

ये किताबें कई हजार बरस पहले लिखी गई थीं। जिन लोगों ने ऐसी-ऐसी किताबें लिखीं वे जरूर बहुत बड़े आदमी थे। इतने दिन गुजर जाने पर भी ये पुस्तकें अब तक जिंदा हैं, लड़के उन्हें पढ़ते हैं और सयाने उनसे उपदेश लेते हैं।

उज़्बेकिस्तान में हिन्दी का परचम

लाल बहादुर शास्त्री विद्यालय

डॉ. मनीष कुमार मिश्रा

विजिटिंग प्रोफ़ेसर (ICCR हिन्दी चेयर) ताशकंद स्टेट युनिवर्सिटी ऑफ ओरिएंटल स्टडीज़, ताशकंद, उज़्बेकिस्तान

अपने समय और परिस्थितियों की विशेषता और विलक्षणता को समझना हमेशा ही भविष्य की राह आसान बनाता है। ऐसे में वे राष्ट्र जो जनतांत्रिक मूल्यों वाले समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा जो अपनी राष्ट्रीय एकता, अखंडता और संप्रभुता के प्रति दृढ़संकल्प होते, हुए वैश्विक अर्थव्यवस्था और प्रगति के लिए निरंतर प्रयासरत है ; उनमें भारत और उज़्बेकिस्तान प्रमुखता से शामिल हैं। दोनों राष्ट्रो के साहित्यिक मूल्यों में आपसदारी की बात करें तो उज़्बेकिस्तान में सन 1925 के आसपास रविंद्रनाथ टैगोर की कहानियों एवं कविताओं का उज़्बेकी एवं रूसी भाषा में अनुवाद के माध्यम से परिचय हुआ। सन 1940 से 1960 के बीच प्रेमचंद, मोहम्मद इकबाल, मिर्जा गालिब, अमृता प्रीतम और यशपाल की रचनाएं यहां की भाषा में अनुवाद करके प्रकाशित की गयीं।

अब तक अनुमानतः 30 से 35 भारतीय साहित्यकारों का साहित्य उज़्बेकी भाषा में अनुवाद के माध्यम से पहुंच चुका है। अमृता प्रीतम ने कई बार उज़्बेकिस्तान की यात्रा की। अमृता प्रीतम ने अपनी उज़्बेकिस्तान की यात्राओं से संबंधित कुछ निबंध भी लिखे जो सन 1962 में प्रकाशित उनकी पुस्तक 'अतीत की परछाइयां' में संकलित हैं। सन 1978 में भारत के 30 लेखकों की कहानियों को उज़्बेकी में अनुवाद करके पुस्तक के रूप में ताशकंद से प्रकाशित किया गया। भारत के संदर्भ में साहित्य रचनेवाले उज़्बेकी साहित्यकारों में गफूर गुलाम, हमीद गुलाम, अस्काद मुहतार, हमीद अलीमजान, मिरतेमीर, सईदा जुनुनोवा, एरकीन वहीदोवा और तमारा खोदजाएवा का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है।

ताशकंद के लाल बहादुर शास्त्री विद्यालय में प्रारंभिक शिक्षा के आधार पर हिंदी पढ़ाई जाती है जिसकी शुरूआत 1955 के आसपास हुई। पाठशाला क्रमांक 24/ मकतब 24 प्रसिद्ध लेखक दिमित्रोव के नाम से ताशकंद में शुरू हुआ। सन 1972 में इसका नाम बदलकर लाल बहादुर शास्त्री विद्यालय किया गया। यहाँ कक्षा 5 से ही हिन्दी का अध्यापन होता है। इस विद्यालय में लगभग 1400 विद्यार्थी हैं जिनमें से लगभग 800 विद्यार्थी यहाँ हिन्दी सीखते हैं। सिर्फ हिन्दी पढ़ाने के लिए यहाँ वर्तमान में 07 शिक्षक कार्यरत हैं। इस विद्यालय की वर्तमान डायरेक्टर नोसिरोवा दिलदोरा यहाँ की हिन्दी शिक्षिका भी हैं। अन्य शिक्षकों में अब्दुर्राहमनोवा निगोरा, तोजीमुरुदोवा सुरइयो, तुर्दीओहूननोबा, कुरबानोवा ओजोदा और मिर्ज़ायूरादोवा मफ़ूजा शामिल हैं। लाल बहादुर शास्त्री विद्यालय, ताशकंद संभवतः न केवल उज़्बेकिस्तान अपितु पूरे मध्य एशिया में हिंदी अध्ययन अध्यापन का सबसे बड़ा केंद्र है।

इस विद्यालय के हिन्दी छात्रों को हिंदी भाषा रुचिपुर्ण तरीके से सिखाने के लिए पाठ्य सामग्री को लगातार नए स्वरूप में तैयार करने का कार्य चलता रहता है। नवीनतम बदलाव वर्ष 2021 में किया गया। सभी कक्षाओं की (कक्षा 5 से 11 तक) किताबों को बदलने का काम स्कूल के शिक्षकों तथा ताशकंद स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ ओरिएंटल स्टडीस्ज के वरिष्ठ इंडोलजिस्ट की मदद व सुझाव से पाठ्य पुस्तक समिति ने किया। इन किताबों के प्रकाशन के लिए भी भारतीय दूतावास आर्थिक सहायता देता रहता है।

विद्यालय के बायीं तरफ़ शास्त्री जी की विशाल प्रतिमा लगी हुई है। इस प्रतिमा का अनावरण प्रसिद्ध फ़िल्म अभिनेता राज कपूर ने 70 के दशक में की थी। उन दिनों हिन्दी के 35 से अधिक अध्यापक यहाँ कार्यरत थे। लाल बहादुर शास्त्री संस्कृति केंद्र, भारतीय दूतावास की तरफ़ से यहाँ एक संग्रहालय कक्ष भी बनाया गया है। इस कक्ष में पुस्तकों, पत्रिकाओं के साथ साथ भारतीय संस्कृति के प्रतीक चिन्हों के रूप में कई वस्तुओं को सँजोकर रक्खा गया है। शास्त्री जी की एक प्रतिमा इस कक्ष में भी लगाई गयी है। इस संग्रहालय कक्ष के लिए समय-समय पर कई भेंट वस्तुएँ भारतीय दूतावास के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती है।

स्वर्गीय लाल बहादुर शास्त्री जी के पुत्र अनिल शास्त्री जी अपनी पत्नी के साथ इस विद्यालय में आ चुके हैं। वे विद्यालय की व्यवस्था से बड़े प्रभावित भी हुए। विजिटर बुक में उन्होंने अपने हस्ताक्षर के साथ संदेश भी लिखा है। वे लिखते हैं कि, "मैं अपनी पत्नी मंजू के साथ लाल बहादुर शास्त्री विद्यालय आया और बहुत अच्छा लगा। स्कूल में बहुत सुधार है और मैं प्रधानाचार्य एवं प्रबंध समिति को बधाई देता हूँ। यहाँ पर संग्रहालय से बहुत प्रभावित हूँ। आप ने

शास्त्री जी की स्मृति को बनाए रखने का बहुत अच्छा कार्य किया है। शास्त्री परिवार से किसी प्रकार की सहायता चाहें तो बेझिझक मुझे या मंजू को बताएं।"

समग्र रूप से हम यह कह सकते हैं कि भारत और उज्बेकिस्तान विश्व के दो महान गणतंत्र हैं। 21वीं शती के विश्वव्यापी मानवीय मूल्यों, शांति, स्थिरता, प्रगति और स्वतंत्रता के स्वप्न को साकार करने में इन दोनों राष्ट्रों की भाषायी साझेदारी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहेगी। पूरे मध्य एशिया में हिंदी अध्ययन अध्यापन के महत्त्वपूर्ण केंद्र के रूप में लाल बहादुर शास्त्री विद्यालय के अवदान को कभी भुलाया नहीं जा सकेगा।

भूल-चूक

'प्रायश्चित' शेष कहानी

(विश्वा के अक्टूबर 2024 के अंक में भगवतीचरण वर्मा की कहानी 'प्रायश्चित' आपने पढ़ी लेकिन वह पूरी नहीं थी। कहानी और वह भी अधूरी! कहानी में तो उत्सुकता की सबसे बड़ा रोमांच होता है–इसके बाद क्या हुआ? अगर उस रोमांच के लिए तीन महिने इंतजार करना पड़े तो यह नितांत अनुचित है। यह भूल हुई कि कहानी का उत्तरार्द्ध नहीं जा पाया जो अब आपकी सेवा में प्रस्तुत है। -सं.)

इसके बाद पूजा-पाठ की बात आई। पंडित परमसुख ने कहा– उसमें क्या मुश्किल है, हम लोग किस दिन के लिए हैं रामू की माँ, मैं पाठ कर दिया करूँगा, पूजा की सामग्री आप हमारे घर भिजवा देना।

पूजा का सामान कितना लगेगा?

अरे, कम-से-कम में हम पूजा कर देंगे, दान के लिए क़रीब दस मन गेहूँ, एक मन चावल, एक मन दाल, मन-भर तिल, पाँच मन जौ और पाँच मन चना, चार पसेरी घी और मन-भर नमक भी लगेगा। बस, इतने से काम चल जाएगा।

अरे बाप रे! इतना सामान! पंडितजी इसमें तो सौ-डेढ़ सौ रुपया ख़र्च हो जाएगा–रामू की माँ ने रुआँसी होकर कहा।

फिर इससे कम में तो काम न चलेगा। बिल्ली की हत्या कितना बड़ा पाप है, रामू की माँ! ख़र्च को देखते वक़्त पहले बहू के पाप को तो देख लो! यह तो प्रायश्चित है, कोई हँसी-खेल थोड़े ही है–और जैसी जिसकी मरजादा, प्रायश्चित में उसे वैसा ख़र्च भी करना पड़ता है। आप लोग कोई ऐसे-वैसे थोड़े हैं, अरे सौ-डेढ़ सौ रुपया आप लोगों के हाथ का मैल है।

पंड़ित परमसुख की बात से पंच प्रभावित हुए, किसनू की माँ ने कहा– पंडितजी ठीक तो कहते हैं, बिल्ली की हत्या कोई ऐसा-वैसा पाप तो है नहीं– बड़े पाप के लिए बड़ा ख़र्च भी चाहिए।

छन्नू की दादी ने कहा– और नहीं तो क्या, दान-पुन्न से ही पाप कटते हैं। दान-पुन्न में किफ़ायत ठीक नहीं।

मिसरानी ने कहा– और फिर माँजी आप लोग बड़े आदमी ठहरे। इतना ख़र्च कौन आप लोगों को अखरेगा।

रामू की माँ ने अपने चारों ओर देखा– सभी पंच पंडितजी के साथ। पंडित परमसुख मुस्कुरा रहे थे। उन्होंने कहा– रामू की माँ! एक तरफ़ तो बहू के लिए कुंभीपाक नरक है और दूसरी तरफ़ तुम्हारे ज़िम्मे थोड़ा-सा ख़र्चा है। सो उससे मुँह न मोड़ो।

एक ठंडी साँस लेते हुए रामू की माँ ने कहा– अब तो जो नाच नचाओगे नाचना ही पड़ेगा।

पंडित परमसुख ज़रा कुछ बिगड़कर बोले– रामू की माँ! यह तो ख़ुशी की बात है– अगर तुम्हें यह अखरता है तो न करो, मैं चला– इतना कहकर पंडितजी ने पोथी-पत्रा बटोरा।

अरे पंडितजी– रामू की माँ को कुछ नहीं अखरता– बेचारी को कितना दुःख है– बिगड़ो न!– मिसरानी, छन्नू की दादी और किसनू की माँ ने एक स्वर में कहा।

रामू की माँ ने पंडितजी के पैर पकड़े– और पंडितजी ने अब जमकर आसन जमाया।

और क्या हो?

इक्कीस दिन के पाठ के इक्कीस रुपए और इक्कीस दिन तक दोनों बखत पाँच-पाँच ब्राह्मणों को भोजन करवाना पड़ेगा, कुछ रुककर पंडित परमसुख ने कहा– सो इसकी चिंता न करो, मैं अकेले दोनों समय भोजन कर लूँगा और मेरे अकेले भोजन करने से पाँच ब्राह्मण के भोजन का फल मिल जाएगा।

यह तो पंडितजी ठीक कहते हैं, पंडितजी की तोंद तो देखो! मिसरानी ने मुस्कुराते हुए पंडितजी पर व्यंग किया।

अच्छा तो फिर प्रायश्चित का प्रबंध करवाओ, रामू की माँ ग्यारह तोला सोना निकालो, मैं उसकी बिल्ली बनवा लाऊँ– दो घंटे में मैं बनवाकर लौटूँगा, तब तक सब पूजा का प्रबंध कर रखो– और देखो पूजा के लिए...

पंडितजी की बात ख़त्म भी न हुई थी कि महरी हाँफती हुई कमरे में घुस आई और सब लोग चौंक उठे। रामू की माँ ने घबराकर कहा—अरी क्या हुआ री?

महरी ने लड़खड़ाते स्वर में कहा—माँजी, बिल्ली तो उठकर भाग गई!

कानून का राज

ब्रिटेन में कानून के राज की आभा का एक उदाहरण देखिए।

इसी साल दो मई 2024 को नगर निगम के मेयर जैसे एक चुनाव में पूर्व प्रधानमंत्री जॉनसन वोट डालने गए तो साउथ ऑक्सफोर्डशायर के तीन स्थानीय सामान्य नागरिकों ने उन्हें वोटर आइडी दिखाने को कहा। पूर्व प्रधानमंत्री ने उन्हें एक पत्रिका दिखाई। वे नहीं माने। इस पर स्थानीय पुलिस के जवानों ने उन्हें बिना आईडी वोट नहीं डालने दिया। इस पर वे वापस गए और अपना ड्राइविंग लाइसेंस पहचान के तौर पर लेकर आए। इसके बाद ही उन्हें वोट डालने दिया गया।

इस घटना का जिक्र डेली मेल के कॉलम में खुद जॉनसन ने किया। उन्होंने उन तीन नागरिकों की मुक्त कंठ से सराहना की और पुलिस अधिकारियों को शाबाशी दी।

क्या अपने को सेवक कहने वाले राजनेताओं में ऐसी विनम्रता और कानून की पालना करने वाले नागरिकों और पुलिस अधिकारियों के प्रति ऐसे सम्मान की कल्पना भी की जा सकती है? **प्रस्तुति : त्रिभुवन**

भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार : शंकरन कुट्टी पोट्टेक्काट

डॉ. दीपक पाण्डेय

सहायक निदेशक, केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली-66
ईमेल –dkp410@gmail.com

भारतीय ज्ञानपीठ का 1980 का वार्षिक पुरस्कार मलयालम के सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री शंकरन कुट्टी पोट्टेक्काट को प्रदान किया गया। यह पुरस्कार उनकी सृजनात्मक कृति (उपन्यास) 'ओरु देशत्तिन्ते कथा' के लिए समर्पित था। श्री शंकरन कुट्टी दृढ़ सामाजिक प्रतिबद्धता और आदर्शों वाले लेखक थे, जिनके पास एक व्यक्तिवादी दृष्टि थी। उन्होंने अपने साहित्य में समाज के उत्थान और जनकल्याण की भावना को सर्वोपरि रखा। श्री शंकरन कुट्टी जी ने अपने साहित्य में जीवन के चित्र छोटी-छोटी सूक्ष्मताओं और महत्त्वपूर्ण पक्षों को उजाकर करते हुए खींचे हैं जिनमें स्वाभाविक सहजता है और वे पाठक को मंत्रमुग्ध सा कर देते हैं। उनके साहित्य में भावनाओं का उन्मेष है, उनके पात्र साधारण जनजीवन से लिए गए हैं। लेखक की कहानियाँ जीवन की सुन्दर, सुघड़ भावावालियाँ हैं, उनका आधार छोटा-छोटा पर महत्त्व की घटनाओं के बदलते मनोभाव हैं, प्रेम की सफलता-विफलता की वेदनाएँ हैं। श्री शंकरन कुट्टी ने यात्रा-संस्मरण, यात्रा-वृत्तांत लेखन से साहित्य को समृद्ध करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है, इसलिए मलयालम साहित्य में आपको जॉन गुंथर माना जाता है। आपके साहित्य में अभिव्यक्त भाव-संवेदनाओं की गहनता का ही परिणाम है कि आपकी अनेक रचनाओं का अंग्रेजी, इतालवी, रूसी, जर्मन, चेक के अलावा सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया गया है।

श्री शंकरन कुट्टी पोट्टेक्काट का जन्म कोझिकोड में अंग्रेजी स्कूल शिक्षक कुंचिरमन पोट्टेक्काट के पुत्र के रूप में हुआ था। आपकी प्रारंभिक शिक्षा हिंदू स्कूल और ज़मोरिन हाई स्कूल में हुई और उन्होंने 1934 में ज़मोरीन कॉलेज से स्नातक की उपाधि प्राप्त की। अध्ययन के दौरान आपने भारतीय और पश्चिमी क्लासिक्स का गहन अध्ययन किया। 1937 से 1939 तक कालीकट गुजराती स्कूल में शिक्षक के रूप में सेवा की परंतु समकालीन परिस्थितियों से प्रभावित होकर देश-सेवा के उद्देश्य से 1939 में त्रिपुरा कांग्रेस में भाग लेने के लिए नौकरी छोड़ दी। कुछ साल मुंबई में रहकर जीवनयापन करते रहे और 1945 में पुन: केरल लौट आए। 1952 में, उन्होंने सुश्री जयवल्ली से विवाह किया और कालीकट के पुथियारा में बस गए। पोट्टेक्काट की चार संताने हुईं - दो बेटे और दो बेटियाँ। श्री शंकरन कुट्टी पोट्टेक्काट थलसेरी लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र से सांसद भी चुने गए थे तथा 1962-1967 तक सांसद सदस्य रहे। इस राजनैतिक सफ़र के दौरान भी वे साहित्य-सृजन में रत रहे। श्री शंकरन कुट्टी ने केरल साहित्य अकादमी, केरल संगीत नाटक अकादमी, साहित्यिक श्रमिक संघ और थुनजन मेमोरियल कमेटी जैसे कई अन्य सांस्कृतिक और सामाजिक संगठनों के पदाधिकारी के रूप में भी कार्य किया। 1980 में पत्नी की मृत्यु –से बहुत दुखी रहने लगे और दिनोंदिन उनकी हालत खराब होती गई। जुलाई 1982 में पक्षाघात के बाद उन्हें अस्पताल में भर्ती कराया गया और 6 अगस्त, 1982 को उन्होंने अंतिम साँस ली। श्री पोट्टेक्काट जी की साहित्य-लेखन की यात्रा 'राजनेथी' नामक पहली कहानी से शुरू होती है जो 1928 में ज़मोरिन कॉलेज की मैगज़ीन में प्रकाशित हुई थी। उनकी भावाभिव्यक्तियों ने पाठकों को गहरा प्रभावित किया और धीरे-धीरे वे मलयालम साहित्य में लोकप्रिय लेखक के तौर पर प्रतिष्ठित हो गए।

'ओरु देशत्तिन्ते कथा' (कथा एक प्रांतर की) उत्कृष्ट रचना है। यह उस अतिरानिप्पदम गाँव की कथा है जिसमें श्री शंकरन कुट्टी पोट्टेक्काट का जन्म हुआ, जहाँ उन्होंने अपना बालपन एवं किशोर जीवन बिताया। इस उपन्यास की विषय-वस्तु केरल के एक गाँव की विकास-गाथा का चित्रण करती है, वहाँ की एक जाति का, एक छोटी इकाई का विश्वसनीय दिग्दर्शन, जो स्थानीय होते हुए भी विश्व-गत है। उपन्यास का प्रमुख चरित्र श्रीधरन स्वयं पोट्टेक्काट ही हैं,

तथ्यों का कुशल प्रस्तुतिकरण उपन्यास की कोमल दीप्ति से मंडित है। मूलत: उपन्यास में लेखक की सामाजिक परिवेश के प्रति गहरी चिंता व्यक्त हुई है। यह श्री शंकरन कुट्टी जी की लेखकीय प्रतिबद्धता का प्रमाण है कि उनकी लेखनी मनुष्य की नियति के दोनों पक्षों को उद्घाटित करती हैं–उसका उल्लास और उसका विषाद। उन्होंने भावुकता के स्थान पर भावना को अपनाया है।

कृतियाँ :

काव्य : प्रभाती कान्ति, संचारियुते गीतंगल, प्रेम-शिल्पी

उपन्यास : नाटन् प्रेमम्, प्रेम शिक्षा, मुट्टुपटम्, विषकन्यका, ओरु तेरुविन्ते कथा, कराम्बु, ओरु देशत्तिन्ते कथा, कुरुमुलकु, कबीना, वल्लिका देवी

कहानी-संग्रह : मणिमालिका, राजमल्लि, निशागन्धि, पुल्लिमान्, मेघमाला, वैजयन्ती, जल तरंगम्, पौर्णमी, रंग-मण्डपम्, चन्द्रकान्तम्, पद्मरागम्, इन्द्रनीलम्, हिम वाहिनी, प्रेत भूमि, यवनिकक्कुपिनिल, कल्लिप्पूक्कल, वन कौमुदी, कनकाम्बरम्, अन्तरवाहिनी, एषिलां पाला, वृन्दावनम्, काट्टु चम्पकम्, तेरंजेदुत कथकल, एस. के. पोट्टेक्काटिण्टे चेरु कथकल्

यात्रा-विवरण : कश्मीर, यात्रा स्मरण कल, कारि कलुटे नाट्टिल्, सिंह भूमि, नील डायरी, मलय नाटुकलिल, इन्नत्ते यूरोप, इण्डोनेशियन डायरी, सोवियत डायरी, पथिरा सूयन्तेनाटिल, बालि द्वीप, बोहेमियन चित्रोल, हिमालय साम्राालि, नेपाल यात्रा, लन्दन गोड बुक, कैरोककल, संचार साहित्यम् 3-भाष, क्लियोपेट्रोल

नाटक : अच्छन, निवत्य : गद्य मेखला, एण्टे काषितंगल

हास्य-व्यंग्य : पोन्तक्काटुकल,

संस्मरण : संसारिकुन्त डायरी कुरिप्युकल

पुरस्कार : साहित्य अकादमी पुरस्कार, ज्ञानपीठ पुरस्कार, केरल साहित्य अकादमी पुरस्कार

अभिभाषण

वर्ष 1980 का ज्ञानपीठ पुरस्कार एक ऐसे संधिकाल में ग्रहण कर रहा हूँ जबकि हमारा देश राजनैतिक और सांस्कृतिक परिवर्तन के वात्याचक्र से गुजर रहा है। मैं यह बात विशेषकर इसलिए कह रहा हूँ कि कला, साहित्य और संस्कृति के संबंध में आज की नयी पीढ़ी की धारणाएँ पुरानी पीढ़ी से बिल्कुल ही भिन्न हैं। इन धारणाओं के साथ उनके मूल्य भी बदल गये हैं। कुछ लोग तो यहाँ तक सोचने लगे हैं कि विज्ञान और टैक्नोलॉजी की जबरदस्त प्रगति के इस युग में साहित्यकार का स्थान है ही कहाँ ?

विज्ञान और टैक्नोलॉजी के नये-नये आविष्कारों के परिणाम स्वरूप हमारे रहन-सहन के तरीके एक बड़ी सीमा तक बदल गये हैं। आगे ये और भी बदलते रहेंगे। परिवर्तन की अभी और भी संभावनाएँ हैं। किंतु यदि हम गंभीरता से विचार करें तो पायेंगे कि वे परिवर्तन हमारे भीतर की आसुरी प्रवृत्तियों को ही बढ़ावा दे रहे हैं। विज्ञान के दो रूप हैं, एक वह जो मनुष्य के भोग-विलास में वृद्धि के लिए उत्सुक है, दूसरा वह रूप जो संहार की ओर उन्मुख है। यह संहारक प्रवृत्ति अधिक बलशाली है। कला और साहित्य का उद्देश्य तो सृजन है, संहार नहीं। इसलिए इस युग में जबकि विज्ञान और टैक्नोलॉजी की अंतिम परिणति मानव सभ्यता के संहार की ओर संकेत करती है, केवल कला और साहित्य ही मानव समाज का परित्राण कर सकते हैं। जो सच्चा साहित्य है उसे ऐसी प्रेरणा देनी चाहिए कि मनुष्य के भीतर का पशुभाव नष्ट हो, भ्रातृ-भाव, समानता और शांति जैसे मानव मूल्यों का विकास हो। मेरा विश्वास है कि सत्साहित्य वह है जो मानव मस्तिष्क में सद्भावना का विकास करे। समाज के श्रेष्ठतम विचारों को सँजोने की सामर्थ्य प्रदान करे। मैंने अपना साहित्यिक जीवन इसी भावना के साथ प्रारंभ किया।

अध्ययन के दौरान मैंने प्राचीन भारतीय वांङ्मय का जो ज्ञान प्राप्त किया था उसने मुझे अपने साहित्यिक क्षेत्र में सदा सत्प्रेरणा प्रदान की। पश्चिमी साहित्य की जानकारी मेरे लिए एक और उपलब्धि संपत्ति सिद्ध हुई। इस्लाम और ईसाई धर्मों के आगमन से मलयालम भाषा और साहित्य की समृद्धि ही हुई है। मलयालम भाषा में संस्कृत शब्दों की बहुलता है। इस तरह संस्कृत व द्रविड़ भाषाओं ने तथा अंग्रेजी, अरबी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी आदि विदेशी भाषाओं के संपर्क ने मलयालम भाषा और साहित्य को एक विशेष रंग-रूप और सौरभ प्रदान किया है।

जैसे विशाल वट वृक्ष की जड़ें होती हैं उसी तरह भारतीय भाषाओं का साहित्य भी देश में व्याप्त है किंतु एक प्रदेश की सांस्कृतिक और साहित्यिक परिस्थितियों और उपलब्धियों को अन्य प्रदेशों के लोग प्राय: नहीं समझ पाते। हम अमेरिका, रूस, स्वीडन आदि देशों के साहित्यकारों के बारे में तो जानते हैं किंतु अपने पड़ोसी देशों के कवियों, कलाकारों के संबंध में लगभग अनभिज्ञ हैं। यह दयनीय स्थिति है। भारत के सभी प्रदेशों के लोगों में संपूर्ण भारतीय साहित्य को जानने और समझने की क्षमता होनी चाहिए। इसके लिए पर्याप्त सुविधाएँ और अवसर प्रदान किये जाने चाहिए।

साहित्य का उद्देश्य मनुष्य को जागृत करना और उसकी अंतरात्मा को ऊँचा उठाना है। साथ ही, साहित्य का यह भी उद्देश्य है कि विशाल भारत देश के विभिन्न प्रदेशों के लोगों को समता, सहयोग और पारस्परिक सांस्कृतिक समन्वय द्वारा एक साथ निकट लाये चाहे वे बंगाली हों, पंजाबी हों या तमिलनाडू के निवासी हों। यह भ्रातृभाव केवल मनुष्य तक ही सीमित नहीं है। प्रेमी की परिधि विशाल होती है। उसमें पशु-पक्षी और यहाँ तक वनस्पतियाँ भी समा जाती है। हमारे ऋषि-मुनियों, पुराणकारों ने इस विश्वव्यापी प्रेम का प्रसार किया। हमारे महाकवि कुमारन आसन ने कहा है–

तरू पक्षि भृंगगलोडुम किन्नर रोहुम ।
पुर रोड मेन्दुमे, ओरु मट्टि वरुल्लिलेन्दुम्
सरल स्नेह रसम् निनष्णु ज्ञान ।

"ऋषियों ने प्रेम का प्रसार केवल मनुष्य तक ही नहीं, पक्षियों और वृक्षों तक में किया है।" किंतु यह प्रकृति के प्रति स्नेह और करुणा की भावना-प्राणी मात्र के प्रति लगाव, पुराने युग की भूली-बिसरी बात जैसे हो गयी है।

मैं आदि शंकराचार्य के प्रदेश में उत्पन्न हुआ हूँ। शताब्दियों पूर्व आचार्य शंकर ने अद्वैत सिद्धांत के द्वारा न केवल संपूर्ण भारत में दिग्विजय प्राप्त की थी अपितु भारत के चारों कोनों में चार मठों की स्थापना की और भारतवासियों को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में आबद्ध किया। आचार्य शंकर ने संपूर्ण भारतवासियों को एक समरस इकाई मानकर अपनी साहित्य रचना की। उस महान ऋषि ने देश की सभी नदियों की स्तुति में स्त्रोत लिखे। गंगा की स्तुति में लिखी उनकी पंक्तियाँ सुनिए–

शैलेन्द्रादवतारिणी निजजले
मज्जनोद्धारिणी।
पारावार-विहारिणी विजयते गंगा
मनोहारिणी।

शंकराचार्य के दर्शन में गंगा को सारे देश की समन्वित संपत्ति के रूप में स्थान दिया गया है। कालिदास जैसे महाकवियों ने भी भारत देश की एकता पर बल दिया था। इसी तरह महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इसी महान संदेश को अपने एक लेख "अरण्येर सन्देश" में सुनाया है। किंतु आज वह प्रेम और समता की भावना मानो प्राचीन काल की वस्तु हो गयी है। हमारे देश में जो बुराइयाँ आज उत्पन्न हो गयी हैं उसका एक मुख्य कारण भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की अवहेलना भी है।

सेवा-भावना का स्थान स्वार्थ भावना ने ले लिया है। आज के मनुष्य का मानसिक रूझान इस ओर है कि अपने व्यक्तिगत स्वार्थ की पूर्ति के लिए और सांसारिक सुख-सुविधा की पूर्ति के लिए किसी भी बुरे-से-बुरे साधन को अपनाया जा सकता है। प्रकृति के प्रेम की विज्ञान की वेदी पर बलि दे दी गई है। वनों का बुरी तरह विनाश किया जा रहा है और मरुस्थलों की परिधि बढ़ती जा रही है। इस बात से अनभिज्ञ हैं कि कँटीली झाडियाँ और मरुस्थल अब हमारे मस्तिष्क में भी घर कर गए हैं। अब भी समय है कि हमारे साहित्यकार, कलाकार आगे आयें और भारत देश को इस महान विपत्ति से बचायें।

XXXX

('ज्ञानपीठ पुरस्कार - संपादक- बिशन टंडन' ज्ञानपीठ प्रकाशन पुस्तक को इस लेख के लिए आधार बनाया गया है। संपादक एवं प्रकाशक के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।)

वे दिन : वे लोग

मैं बहुत गरीब आदमी हूँ : सेठ सोहनलाल दूगड़

संकलन : शिवांगी जोशी

बिना किसी डिग्री और पोथियों की पढ़ाई के एक महत्त्वाकांक्षी युवक सोहनलाल दूगड़ (1895-1978) अपना भविष्य बनाने अपनी पत्नी का सुहाग चिह्न गिरवी रखकर प्रथम विश्व युद्ध के काल में भारत की राजधानी और व्यापारिक केंद्र कोलकाता पहुँच गया। वहाँ उनकी आय, घाटे, दानशीलता, योग्यता, कौशल का क्षेत्र बना सट्टा-फाटका; व्यापार की बजाय एक कम सम्माननीय काम। करोड़ों कमाया, करोड़ों गंवाया, मुक्त हस्त से दान दिया और निस्पृह भाव से शरीर त्याग दिया।

एक बार दिल्ली में मुनि सुशील कुमार ने सर्व धर्म सम्मेलन आयोजित किया। इसमें उन्होंने कहा– मेरे पास इस समय देने के लिए पैसे नहीं हैं। मेरी अंगुली में एक लाख रुपए की हीरे की अंगूठी है मैं इस सम्मेलन को समर्पित करता हूँ।

एक बार सोहन लाल आचार्य रजनीश से मिलने गए और बहुत से रुपए उनके चरणों में रख दिए। रजनीश ने कहा– मुझे अभी रुपयों की आवश्यकता नहीं है, होने पर ले लूँगा। सोहनलाल बोले– मैं सटोरिया हूँ। वर्तमान में जीता हूँ। क्या पता कल मेरे पास देने को कुछ हो, न हो। मैं बहुत गरीब आदमी हूँ। मेरे पास सिवाय रुपयों के और कुछ नहीं है।

काश! आज के धन पशु सच्चे धन और धन के सदुपयोग के बारे में दूगड़ जी से कुछ सीख सकें।

गांधी जी के विचारों से प्रभावित होकर उन्होंने हरिजनों के बीच रहना, मिलना जुलना शुरू कर दिया जिसे उनके समाज के लोगों ने पसंद नहीं किया। 1942 में जब उनके पैतृक गाँव (फतेहपुर-शेखावाटी) में बहुत बारिश हुई और लोगों के घर गिर गए तो उन्होंने अपनी जमीन पर उन गरीबों के लिए एक कालोनी बनवाई।

अपने इलाके में बच्चों की शिक्षा के लिए अपने खर्चे से अनेक बाल मंदिर शुरू करवाए।

मृत्यु से पहले उन्होंने वे सभी कागजात जलवा दिए जिनमें उनके मुनीम ने हिसाब लिख रखा था।

आज के समय में जब किसी गरीब को एक कंबल देते हुए भी लोग अखबार में फ़ोटो छपवाते हैं, दूगड़ जी का यह कृत्य अविश्वसनीय नहीं लगता ?

संदर्भ : मरुधरा के शिक्षा अनुरागी सेठ

प्रसंग : इस वर्ष का साहित्य का नोबल : हान कांग

चारु सिंह

(शिक्षक, समीक्षक, विचारक) अहमदाबाद

चुप रहने में कुछ भी गलत नहीं, आख़िरकार, क्या परंपरा औरतों से संकोची और संयमित होने की उम्मीद नहीं करती?

–हान कांग, द वेजीटेरियन

औरतों की अभिव्यक्ति और पितृसत्तात्मक परंपरा के तनाव को रेखांकित करती ये पंक्तियाँ, हान कांग के मशहूर उपन्यास 'द वेजीटेरियन' से ली गई हैं। परंपरा ने स्त्री को मौन होकर सहते जाना सिखाया है लेकिन आख़िर एक स्त्री अपनी चुप्पी की क़सूरवार ख़ुद क्यों ठहराई जाए? उसे तो रचा और गढ़ा ही ऐसे गया है। इस ऐतिहासिक चुप्पी को तोड़ा हान कांग सरीखी लेखिकाओं ने। इतिहास में मानवता के साथ हुए अत्याचारों ने इस लेखिका के भीतर आक्रोश और असंतोष की ऐसी ज्वाला पैदा की जिसे मौन का दर्शन कभी संतुष्ट न कर सका। अपनी विचारोत्तेजक और साहसी लेखनी के ज़रिए, यह दक्षिण कोरियाई लेखिका अपने पाठकों को मानव, उसके समाज और उनकी व्यक्तिगत और सामाजिक स्वतंत्रता के सवालों को लेकर कुछ परेशान करने वाली सच्चाइयों से रूबरू कराती रही है। फिर चाहे वह 'द वेजीटेरियन' का दिल दहलाने वाला गद्य हो या 'ह्यूमन ऐक्ट्स' जैसी रचनाओं में इतिहास से मिले घावों का मार्मिक और बेहद निजी चित्रण-हान का रचना संसार सांस्कृतिक सीमाओं को लांघते हुए, कुछ सार्वभौमिक अनुभवों से संवाद करता है और संस्कृतियों से परे जाकर मानव मात्र से जुड़े बेहद बुनियादी सवालों को उठाता है। साल 2024 में उनकी साहित्यिक उपलब्धियों को सम्मान देते हुए, प्रतिष्ठित नोबेल कमिटी ने उन्हें साहित्य के नोबेल पुरस्कार से नवाजा है। यह पुरस्कार समकालीन विश्व साहित्य की प्रतिनिधि आवाज़ों में से एक के रूप में उनकी उपस्थिति पर औपचारिक मुहर लगाता है।

शुरुआती जीवन और रचनात्मकता

हान कांग का जन्म 1970 में दक्षिण कोरिया के ग्वांगजू में हुआ था। वह एक ऐसे परिवार में बड़ी हुईं, जो आकंठ साहित्य में डूबा हुआ था। उनके पिता 'हान सेउंग-वोन' एक सुप्रसिद्ध उपन्यासकार थे और उनकी माँ एक साहित्यप्रेमी शिक्षिका। पति-पत्नी ने छोटी सी हान कांग को कच्ची उम्र से ही किताबों और कहानी-किस्सों की दुनिया से परिचित करा दिया। उनके शहर का भी उनकी रचनाशीलता के निर्माण में महत्त्वपूर्ण हाथ रहा। यह उनके शहर का इतिहास ही था जिसने उन्हें मानव सभ्यता से जुड़े कुछ कठोरतम प्रश्नों को पूछने के लिए उकसाया। एक ऐसा शहर जो इतिहास और वर्तमान के संक्रमणशील मुहाने पर खड़ा, ख़ुद ही एक कहानी बन गया है। ग्वांगजू-दक्षिण कोरिया का एक ऐसा शहर, जो उस देश के लोकतंत्र समर्थक आंदोलन का प्रतीक बन गया। ग्वांगजू में पली-बढ़ी हान पर 1980 के ग्वांगजू विद्रोह का गहरा असर हुआ। वही विद्रोह, जिसकी याददाश्त इतिहास में नागरिकों के हिंसक दमन के रूप में हमेशा के लिए अंकित है। उस दुखद दमन और बर्बरता का हान के संवेदनशील मन पर एक अमिट प्रभाव दिखलाई पड़ता है और उनकी रचनाओं में एक बार-बार दोहराया जाने वाला विषय बन कर उभरता है।

किशोरावस्था में हान के साहित्यिक जीवन में एक नया और महत्त्वपूर्ण मोड़ तब आया जब वे अपने परिवार के साथ सियोल चली गईं। यहाँ उन्होंने कोरियाई साहित्य में शिक्षा हासिल करना शुरू किया। इसी समय उन्होंने कविता से अपने शुरुआती परिचय के सहारे अपनी लेखन शैली को भी आकार देना शुरू किया और साहित्य की दुनिया में कविता के रास्ते कदम रखा। बाद में वे गद्य की ओर मुड़ीं लेकिन कविता से उनका साथ लगातार बना रहा।

नोबेल समिति ने भी उनके गद्य को एक ख़ास काव्यात्मक (लिरिकल) गद्य के रूप में पहचाना है। गद्य और पद्य को अलग-अलग करके देखने के बजाय हान ने बड़े सजग रूप से काव्यात्मक गद्य को अपनी लेखनी की पहचान और ताक़त के रूप में विकसित किया। वे ख़ुद भी इसे स्वीकार करती हैं और कविता को अपनी रचनात्मकता का श्रेय देते हुए कहा करती हैं कि भावनाओं और अर्थों को अनूठी, विचारोत्तेजक भाषा में कैसे विकसित किया जाए, यह एक ऐसा कौशल है जो उनके उपन्यासों की एक परिभाषित विशेषता बन गई है।

यह कविता में उनके डूबे होने से ही हो सका है।

हान कांग ने 1990 के दशक में अपना पहला काव्य संग्रह प्रकाशित करते हुए एक कवि के रूप में अपना साहित्यिक सफ़र शुरू किया। हालाँकि, जल्द ही वे कथा की ओर मुड़ चलीं और अपने उपन्यासों को जटिल मनोवैज्ञानिक और सामाजिक विषयों के एक व्यापक कैनवास के रूप में तैयार करने लग गईं। उनके पहले ही उपन्यास 'ब्लैक डियर' (1994) को दक्षिण कोरिया में हाथों-हाथ लिया गया। उनके बाद के कार्यों ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी प्रशंसा हासिल करना शुरू किया।

हान कांग की रचनाएँ जो युग की पहचान बन गईं:

द वेजीटेरियन (2007)

'द वेजिटेरियन' उपन्यास की नायिका 'येओंग-हे' एक ऐसी स्त्री है जिसे लगातार बड़े ही हिंसक और डरावने सपने आने लगते हैं और इनसे परेशान होकर वह मांस खाना बंद करने का फैसला करती है। शाकाहार का यह फैसला जो एक साधारण जीवन शैली के चुनाव के रूप में शुरू होता है वह जल्द ही सामाजिक अपेक्षाओं के ख़िलाफ़ एक तरह की नाफ़रमानी के नाटकीय कृत्य में बदल जाता है। नतीजा

उसके अपने परिवार से कटकर अलग-थलग पड़ जाने के रूप में होता है। अंत है–अलगाव, अवसाद और पागलपन। 2015 में डेबोरा स्मिथ ने इसका अंग्रेजी में अनुवाद किया और अगले ही साल 'द वेजिटेरियन' ने 2016 में मैन बुकर इंटरनेशनल पुरस्कार जीता, जिससे हान कांग को वैश्विक प्रसिद्धि मिली। रूप के स्तर पर इस उपन्यास की सुंदर काव्यात्मक शैली और अंतर्वस्तु के रूप में शारीरिक स्वायत्तता, मानसिक बीमारी और दमनकारी संरचना के बतौर पितृसत्ता जैसे कई नाज़ुक विषयों के चुनाव के लिए इसकी प्रशंसा की जाती है। खंडित, तीन-भाग वाली यह कथा जिसमें येओंग-हेके पति, बहनोई और बहन के दृष्टिकोण से कहानी सुनाई गई है– की सराहना इसकी अभिनव कहानी-कला और मनोवैज्ञानिक गहराई के लिए की गई।

द वेजीटेरियन में व्यक्ति की आजादी और उस पर सामाजिक नियंत्रण के बीच के तनाव को बखूबी दिखलाया गया है। कहानी में येओंग-हे का मांस खाने से इनकार केवल भोजन संबंधी एक चुनाव भर नहीं है। यह पितृसत्तात्मक संस्कृति की कठोरता के खिलाफ एक स्त्री का विद्रोह बन जाता है। शाकाहार से बदली येओंग-हे की देह को लेकर बुने गए कहानी के घटनाक्रम एक औरत के शरीर और उसकी पहचान के बीच के संबंध पर सोंचने को मजबूर करते हैं। क्या एक औरत की देह ही उसकी पहचान है? क्या रूप-रंग बदलने से वही स्त्री कुछ और बन जाती है? क्या देह से अलग एक स्त्री का कोई अस्तित्व नहीं है? उपन्यास हिंसा के विचार की भी पड़ताल करता है और दिखलाता है कि यह किस तरह से मानवीय रिश्तों में प्रकट होती है और पितृसत्ता से इसका क्या रिश्ता है। इस उपन्यास को पढ़ते हुए भारतीय पाठक कल्पना कर सकता है कि क्या हो, जो हमारे देश के किसी परंपरागत शाकाहारी परिवारों में एक बहू फैसला करे कि वह अब केवल मांस ही खाएगी– क्या उसे भी ऐसी ही परिस्थितियों से गुजरना पड़ेगा?

ह्यूमन ऐक्ट्स (2014)

1980 के ग्वांगजू विद्रोह की पृष्ठभूमि पर आधारित 'ह्यूमन एक्ट्स' नरसंहार के बाद जूझ रहे कुछ पात्रों के जीवन की कथा रचता है। कथा टुकड़ों में चलती है, विद्रोह के तत्काल बाद से लेकर अगले कई दशकों तक। विद्रोह के बाद बचे लोगॉन में कुछ विद्रोही हैं, कुछ गवाह या दग़ाबाज़। ये जीवित तो हैं, लेकिन यह जीवन आसान नहीं है। व्यथा और आघात की यह कभी खत्म न होने वाली शृंखला ही अब उनका जीवन है। उपन्यास का कथानक भावुक, दुःख भरा और सहानुभूतिपूर्ण है। घावों को कुरेदने की जगह इतिहास का इस्तेमाल, उन्हें सहलाने और मरहम लगाने के लिए किया गया है। उपन्यास की जटिल संरचना, हान को व्यक्तियों और समुदायों पर राज्य द्वारा की गई हिंसा के भावनात्मक, शारीरिक और नैतिक प्रभाव को एक ही साथ कुरेदने और सहलाने की सहूलियत देती है। सामूहिक पीड़ा को दर्ज करने के एक माध्यम के रूप में कथा शैली के इस उपयोग के लिए और कथा के रास्ते इतिहास को मानवीय बनाने की लेखिका की क्षमता के लिए, उनकी प्रशंसा की जाती रही है।

द व्हाइट बुक (2016)

हान के पहले के कार्यों से हटकर, द व्हाइट बुक जीवन, मृत्यु और शोक की एक गहरी पड़ताल है। लघुचित्रों या संस्मरणों की एक शृंखला के रूप में लिखी गई यह पुस्तक, लेखिका की बड़ी बहन की मौत से उपजी उसकी पीड़ा को चित्रित करती है। वह बहन जो बचपन में ही चली गई। हर अध्याय एक थीम– एक सफेद वस्तु– पर आधारित है। यहाँ चावल, बर्फ और सफेद पोशाक पवित्रता, कोमलता और नश्वरता का रूपक बन कर उभरे हैं। बहन की कोमल यादों को लेकर लिखी गई 'द व्हाइट बुक' काव्यात्मक गद्य का एक उत्कृष्ट नमूना है। यहाँ भावनात्मक रूप से सघन विषय को सम्भालने और सहेजने की क्षमता गद्य विधा को उसकी काव्यात्मकता दे पाती है। सफेद रंग का चयन लेखिका ने अस्तित्व के विरोधाभासों, उसकी सुंदरता और उसकी नश्वरता को प्रदर्शित करने के लिए एक कैनवास के रूप में किया है।

2024 में, हान कांग को "ऐतिहासिक आघातों का सामना करने और मानव जीवन की नश्वरता को उजागर करने वाले उनके गहन काव्यात्मक गद्य के लिए" साहित्य में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। समकालीन साहित्य की एक अग्रणी पहचान के रूप में उनकी यह स्वीकृति न केवल दक्षिण कोरियाई साहित्यिक परंपराओं की समृद्धि की ओर ध्यान खींचने के लिहाज से महत्त्वपूर्ण है बल्कि साहित्य और रचनात्मकता में स्त्रियों के योगदान पर ध्यान ले जाने के लिहाज से भी महत्त्वपूर्ण है। अनुवाद एक माध्यम के रूप में बार-बार अंग्रेजी से अलग भाषाओं के साहित्य की श्रेष्ठता को विश्व भर के पाठकों के सामने उजागर करता रहा है। गीतांजली श्री और हान जैसी कितनी ही श्रेष्ठ रचनाकार अपनी भाषाओं में लिखने के कारण तब तक अंतर्राष्ट्रीय पहचान से वंचित रही हैं जब तक उनका अंग्रेजी अनुवाद नहीं हो जाता। मुक्तिबोध जैसे कितने ही महान लेखक हमारी अपनी भाषाओं में मौजूद हैं। एक अदद उम्दा अनुवादक के इंतज़ार में। हान की रचनाओं का 20 से अधिक भाषाओं में अनुवाद किया गया है, जिससे उनके द्वारा उकेरे गए सार्वभौमिक विषयों - हिंसा, आज़ादी, पहचान और दुःख - से दुनिया भर के पाठक जुड़ सके हैं।

हान कांग की साहित्यिक यात्रा साहस और मानव जीवन के प्रति एक निरंतर जिज्ञासा और खोज की यात्रा है। उनकी रचनाएँ पाठकों को समाज, इतिहास और स्वयं के बारे में असुविधाजनक सच्चाइयों का सामना करने के लिए मजबूर करती हैं और ऐसी कहानियों से रूबरू कराती हैं जो जीवन की अस्थिरता और नश्वरता के साक्षी हैं। अपनी उत्कृष्ट कहानी-कला के माध्यम से हान ने दलित-शोषित और खामोश कर दिए गए लोगों के संघर्षों और कथाओं को आवाज़ दी है, इतिहास की परछाइयों को रोशन किया है, जीवन और सुख-दुख की जटिलताओं को व्यक्त किया है, सब कुछ एक स्त्री की नज़र से। आज जब एक स्त्री के रूप में हम उनकी उपलब्धियों का जश्न मना रहे हैं, तब हमें शोषणकारी संरचनाओं द्वारा अनंतकाल से किए जा रहे अन्याय और दमन को आइना दिखाने और चुनौती देने की साहित्य की भूमिका का भी जश्न मनाना चाहिए। साथ ही स्त्री लेखन की संभावनाओं पर पुनर्विचार भी करना चाहिए।

अंग्रेजी से अनूदित–इटली की कवयित्री मारिया मिराग्लिया की तीन कविताएँ

अनुवाद : मुशर्रफ अली

1. शब्द

शब्द, ज़हरीले बाणों की तरह,
आपके हृदय को छेद सकते हैं
वहीं उनकी मिठास,
वैश्विक दुःख का इलाज कर सकती है
चित्रात्मक प्रतीक,
क्या आप जानते हैं उनकी महान शक्ति?
वे आपके भाग्य को गढ़ सकते हैं,
या इंसान को इंसान से दूर कर सकते हैं।
वे दोस्ती और प्रेम का
ऐसा सुनहरा पुल भी बना सकते हैं,
जिसे कोई न तोड़ सके,
यहां तक कि मृत्यु भी।
मीठे शब्द अनमोल हैं,
दुर्लभ पत्थरों से भी कीमती,
जो गहरी खदानों में मिलते हैं
ये आपके जीवन को कवि में बदल सकते हैं,
जो जुनूनी सपनों और सुंदरता के नज़ारों में
खोया रहता है
नीले और साफ आसमान को देखिए,
अंधेरे दिनों में भी,
जब सभी प्राणी
शरण की तलाश में भागते हैं।
आप जन्नत में
आदम की कल्पना कीजिए
आपका जीवन पथ ऐसा
जैसे हरी बाढ़ के बीच
गुलाबी और सफ़ेद फूल उगे हों,

आपकी आत्मा आनंद और
कृतज्ञता से भरी हुई
प्रेम इंसान के लिए ऐसा जैसे,
मधुमक्खी के लिए फूलों का मधु
ऐसे में आपका जीवन हाथ से
वैसे ही फिसलता जा रहा जैसे
वेनिस वासियों की विशाल नाव,
प्रेमियों के शहर में चाँदनी में नहाए
जलमार्गों पर फिसलती है
लेकिन बुरे लोग जो,
नफ़रती और विद्वेषी होते है
उनका जीवन वैसे ही बीतता है
जैसे रेगिस्तान में खड़ा गिरजाघर

2. अहंकारी आदमी

अहंकारी आदमी
अपने विचारों में क़ैद
और अपने अहंकार से घिरे
जैसे एक लोहे के पिंजरे में,
वहाँ से तुम देखते हो
उदय होते सूरज का चमत्कार,
बुलबुल की आवाज़ों से जागते हुए
और चिड़ियों के गीतों के साथ
तुम अपने पंख नहीं फैला सकते
और न ही उनके सुर के साथ उड़ सकते,
न ही रात में
रात के घंटों की जादुई छटा देख सकते
उनकी अद्भुत रंगतों में,
हवा की जादूगरी में
फिर भी जब तुम प्रेमियों को देखते हो
गुलाबी चाँद की सफेद रोशनी में
एक-दूसरे को कोमलता से गले लगाते हुए,
तुम्हारे अंदर जल्दी ही उठती है

एक मजबूत इच्छा
उन भावनाओं को पकड़ने की
जो लंबे समय से तुम्हारा दिल
चुपचाप चाह रहा है
और उन्हें खुद जीने की,
लेकिन घमंडी होने के नाते
तुम कभी नहीं जानते कि
प्यार को कैसे जीता जाए

3. आत्मा की रंगत

तुम अपनी आत्मा को उजागर करने से डरते हो
उसकी सच्चाइयों से
और आईने में देखते हो
अपने प्रतिबिंब पर नज़र गड़ाए
लेकिन गहराई में जाने की सोच

तुम्हें लगभग डरा देती है
तुम्हारी आत्मा वहाँ है
अच्छी तरह छिपी हुई
तुम इसे पहचानने में मुश्किल महसूस करते हो
और जल्द ही इसकी पहचान होती है
तुम थोड़ी शर्मिंदगी महसूस करते हो
इसलिए तुरंत तैयार होते हो
उपाय खोजने के लिए
ताकि इसे वैसे ही बाहर न आने दो
और इसे शृंगार से ढकने की
योजनाएँ बनाने लगते हो
तुम अपने चेहरे को मुस्कानों से सजाते हो
तुम्हारी भाषा शिष्ट और निखरी हुई हो जाती है
तुम्हारे होंठ हमेशा तारीफों के लिए खुलते हैं
या कमजोरों की रक्षा में
सदा अन्याय और पाखंड की निंदा करने वाले
पहले बन जाते हो
तुम्हें ताली की आवाज़ें पसंद हैं
और इसके लिए
तुम दिखावे का ख्याल रखते हो
लेकिन जल्द या देर से
तुम फिर से खुदको अकेला पाओगे

(कवयित्री के संकलन 'एक नई सुबह' से)

स्त्री स्वातंत्र्य और सहअस्तित्व का पर्व

पंकज श्रीवास्तव

महाशिवरात्रि पर शहर-शहर निकलने वाली शिव बरातों और सजे-धजे शिवालों की धूम में एक ऐसी कथा खोई हुई है जो आधुनिक समाज के लिए बड़े काम की है। न सिर्फ़ शिव-पार्वती विवाह बल्कि शिव परिवार में दर्ज सहअस्तित्व का भाव एक ऐसा आदर्श है जिससे विमुख होने की बड़ी कीमत समाज को चुकानी पड़ी है। शिव-विवाह, स्त्री के चयन के अधिकार की उद्घोषणा है।

पार्वती प्रेम के इतिहास की आदि विद्रोही हैं। पर्वतराज हिमवान की बेटी पार्वती एक ऐसे व्यक्ति से विवाह करने के लिए तप करती है जो सामाजिक कसौटी के लिहाज से कहीं से भी उसके योग्य नहीं हैं। लेकिन वह अडिग है। ग़ौर से देखें तो पार्वती, जाति, वर्ग, संप्रदाय, सभी बंधनों को लाँघकर शिव से विवाह करना चाहती हैं। मलंग और भिखारी जैसे शिव से विवाह करके लिए वे तमाम प्रलोभनों को ठुकराती हैं। यहाँ तक कि विष्णु जैसे 'सद्गुणों के धाम' से भी विवाह में भी वह रुचि नहीं दिखातीं, क्योंकि 'मन तो कहीं और रमा' है।

तुलसीकृत रामचरित मानस के बालकांड में इसका सुंदर वर्णन है। ऋषिगण पार्वती के शिव प्रेम की परीक्षा लेने के लिए विष्णु से शादी कराने का प्रलोभन देते हैं। पार्वती जवाब देती हैं–

महादेव अवगुन भवन, बिष्नु सकल गुन धाम
जेहि कर मनु रम जाहि सन तेहि तेही सन काम।

(माना कि महादेव अवगुणों की खान हैं और विष्णु समस्त सद्गुणों के धाम हैं, पर जिसका मन जिसमें रम गया, उसको तो उसी से काम है।)

पार्वती को शिव और विवाह के भविष्य को लेकर तरह-तरह से डराया जाता है, लेकिन वे ज़रा भी नहीं डिगतीं। परिवार के लिए उनका यह फ़ैसला शोक का विषय है लेकिन उनके कठोर संकल्प के आगे सब लाचार हो जाते हैं। विवाह की तैयारियाँ शुरू हो जाती हैं।

विस्तार में न जाकर अब ज़रा बरात का हाल देखें। एक राजकुमारी से विवाह करने जा रहे शिव बरात का हाल जब नगर के बालक देखते हैं कहते हैं–

तन छार ब्याल कपाल भूषण नगन जटिल भयंकरा।
सँग भूत प्रेत पिसाच जोगिनि बिकट मुख रजनीचरा।।
जो जिअत रहिहि बरात देखत पुण्य बड़ तेहि कर सही।
देखिहि सो उमा बिबाहु घर घर बात असि लरिकन्ह कही।।

(दूल्हे के शरीर पर राख लगी है, साँप और कपाल के गहने हैं। वह नंगा, जटाधारी और भयंकर है। उसके साथ भयानक मुखवाले भूत, प्रेत, पिशाच, योगिनियाँ और राक्षस हैं। जो बरात को देखकर जीता बचेगा, सचमुच उसके बड़े ही पुण्य हैं और वही पार्वती विवाह देखेगा। लड़कों ने घर-घर यही बात कही।)

स्पष्ट है कि शिव और पार्वती, दोनों की पृष्ठभूमि अलग है, पर मन रम गया है। परिवार भी विधाता की इच्छा मानकर रोते-कलपते ही इस रिश्ते को स्वीकार करता है। माँ मैना का करुण क्रंदन किसी का भी मन व्यथित कर सकता है। लेकिन पार्वती को विदा करते हुए वे एक ऐसी बात कहती हैं जिसमें स्त्री जीवन का सारा मर्म छिपा है, कम से कम इस कथा की रचना करने वालों के समय का सच तो यही था।

कत विधि सृजीं नारि जग माहीं। पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।
भै अति प्रेम बिकल महतारी। धीरजु कीन्ह कुसमय बिचारी।।

(विधाता ने जगत में स्त्री जाति को क्यों पैदा किया। पराधीन को सपने में भी सुख नहीं मिलता। प्रेम में विकल लेकिन उचित समय न जानकर धीरज धर लिया।)

हिंदी के अनन्य कवि गोरख पांडेय अपने लेख 'सुख के बारे में' की शुरूआत इसी सूत्र से करते हैं। पराधीन सुखी नहीं हो सकता, इसका अर्थ है कि सुख स्वाधीनता में है। सुख की पहली शर्त स्वाधीन होना है। स्त्री के संदर्भ में तो ख़ासतौर पर।

बहरहाल, कुल के बाहर हुए इस विवाह में आगे की कथा स्वाधीनता और सहकार की है।

शिव परिवार का चित्र ग़ौर से देखिये। पार्वती शिव के पैर दबाते हुए शैया पर नहीं हैं, बल्कि उनके बराबर बैठी हुई हैं। हिमालय की कंदरा में यानी प्रकृति की गोद में यह परिवार बसा है। पूरे चित्र को ग़ौर से देखने पर मनुष्य, प्रकृति और पशु जगत के सहअस्तित्व का संदेश साफ़ दिखता है। शिव के गले में साँप है और साँप को खाने वाला मोर कार्तिकेय की सवारी है। वहीं पार्वती की सवारी शेर है तो शिव का नंदी बैल। शेर और बैल साथ हैं। गणेश की सवारी चूहा है जिसे साँप खाता है जो शिव के गले में पड़ा है। यानी सामान्य जीवन में एक दूसरे को भोजन बनाने वाले 'शिव परिवार' में सहकारी भाव से बैठे हैं।

कहते हैं कि शिव अनार्य देवता हैं। आर्यों के आगमन के पूर्व भारत के मूल निवासियों के बीच उनकी पूजा प्रचलित थी। शिव लिंग की पूजा प्रजनन प्रक्रिया को पूजने की आदिम समझ का ही प्रतीक है। ख़ैर, अकादमिक जगत में इन चीज़ों पर बहस होती रहती हैं। सवाल तो उस संदेश का है जो मौजूदा समय में किसी वैक्सीन की तरह है–

स्त्री को बिना जाति-धर्म-नस्ल की बाधा के पति चुनने का अधिकार, और प्रकृति, मनुष्य और पशु जगत में सहकार!

काश लव में जिहाद ढूंढने वाले इस विकट समय में इस धर्म-कथा का मर्म समझा जा सकता। सहअस्तित्व मनुष्यता ही नहीं इस पृथ्वी ग्रह को बचाने की भी शर्त हैं। अंग्रेज़ी में कहें तो CO-EXISTENCE OR NO EXISTENCE.

"रुद्राष्टकम्"

ज़ाहिद अबरोल

"गुलरुख़", निकट डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, नंगल रोड, ऊना (हि.प्र.)-174303 (भारत); मो. 9816643939 ईमेल : abrol.zahid@gmail.com

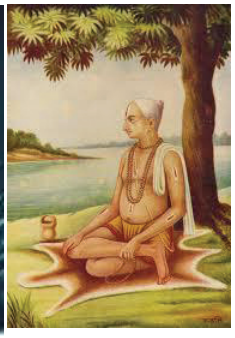

(राम के चरित्र को उत्तर भारत के जन जन तक पहुँचाने का श्रेय गोस्वामी तुलसीदास (1532 ई० – 1623 ई०) को जाता है। यद्यपि वे संस्कृत के भी विद्वान थे लेकिन अपनी बात लोक तक पहुँचाने के लिए उन्होंने लोकभाषा अवधी का सहारा लिया। उनके द्वारा लिखा गया 'रुद्राष्टकम्' बहुत प्रसिद्ध है जो भुजंगप्रयात नामक छंद में लिखा गया है। यह कोई स्वतंत्र रचना नहीं है। यह उत्तरकाण्ड में काकभुशुंडि और गरुड़ के प्रसंग में आता है।

हम जानते हैं कि कई मुगल बादशाहों ने संस्कृत के अनेक ग्रंथों के उर्दू और फारसी में अनुवाद करवाए जिससे संस्कृत न जानने वाले लोग भी संस्कृत वांग्मय से परिचित हो सकें और देश में एक सामासिक संस्कृति के निर्माण का आधार तैयार हो सके। आज भी विश्व के कई पुस्तकालयों में उस समय के अनुवाद उपलब्ध हैं।

विद्वान साहित्यकार ज़ाहिद अबरोल ने मूल रचना के छंद में ही यह अनुवाद किया है जिससे रचना को उसी लय में गाने का आनंद लिया जा सके। –सं.)

नमामीशं-ईशान निर्वाण-रूपं, विभुं व्यापकं ब्रह्म-वेद-स्वरूपम्।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं, चिदाकाशं आकाश-वासं भजेऽहम्॥ 1॥

(1)

हमागीर[1], ज़ाते-ख़ुदा, मग़्फ़िरत-बख़्श[2], बेऐबो-बेतमा'[3], वेदों के ख़ालिक़
सलामे-नियाज़ आपको ऐ ख़ुदा, मालिके-कुल, फ़लकपाय:[4] फ़ैयाज़ो-सादिक़[5]

+++

निराकारं ओंकार-मूलं तुरीयं, गिरा-ज्ञान-गोतीतं ईशं गिरीशम्।
करालं महाकाल-कालं कृपालुं, गुणागार-संसार-पारं नतोऽहम्॥ 2॥

(2)

निराकार, ओंकार, महवे-ख़ुदा[6] हैं और इल्मो-हवासो-सुख़न[7] से बरी हैं
महीबाना[8] सूरत, महाकाल, गंजे-सिफ़ातो-करमफ़र्मा-ओ-सरमदी[9] हैं

+++

तुषाराद्रि-संकाश-गौरं गभीरं, मनोभूत-कोटि-प्रभा-श्री-शरीरम्।
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गङ्गा, लसद्भाल बालेन्दु कण्ठे भुजङ्गा ॥ 3॥

(3)

हिमाला सा संजीदा उजला बदन, इक ज़ख़ीरा-ए-हुस्नो-ज़िया-ओ-शरर[10] है
जटाओं में गंगा नदी मौजज़न[11] है, गले में है सांप और सर पे क़मर[12] है

+++

चलत्-कुण्डलं भ्रू* सुनेत्रं विशालं, प्रसन्नाननं नीलकण्ठं दयालम्।
मृगाधीश-चर्माम्बरं मुण्ड-मालं, प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि॥ 4 ॥

(4)

हसीं चश्मो-अब्रू[13], हैं कानों में कुंडल, रहीम[14] और ख़ुशरू[15] हैं वो नीलकंठी
फ़क़त[16] शेर की खाल और मुंडमाला, जो पहनें उन्हीं शिव की करता हूँ भक्ति

+++

प्रचण्डं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं, अखण्डं अजं भानु-कोटि-प्रकाशम्।
त्रय:-शूल-निर्मूलनं शूलपाणिं, भजेऽहं भवानी-पतिं भावगम्यम् ॥ 5 ॥

(5)

दिलेर और अफ़ज़ल[17] हैं अबदी-ओ-कामिल[18], जलाल और नूर उनका सूरज से बरतर
मिटा दें हर इक शूल त्रिशूलधारी, फ़क़त ध्यान ही से मिलें भोले शंकर

+++

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी, सदा सज्जनानन्द-दाता पुरारी*।
चिदानन्द-सन्दोह मोहापहारी, प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी*॥ 6 ॥

(6)

हर इक फ़न से बरतर, नफ़्अबख़्श[19], सब को ख़ुशी दें, क़ियामत भी लायें पुरारि
हरें मोह को, दाइमी[20] लुत्फ़ बख़्शें, मथें मन को और ख़ुश रहें शूलधारी

+++

न यावद्-उमानाथ पादारविन्दं, भजन्तीह लोके परे वा नराणाम्।
न तावत् सुखं शांति सन्ताप-नाशं, प्रसीद प्रभो सर्व-भूताधिवासं॥ 7 ॥

(7)

उमानाथ को जो न पूजें, कहीं भी मिलेगा उन्हें सुख न ग़म ही का दरमां[21]
कि ऐ क़ल्बे-मख़्लूक़[22] में बसने वाले ख़ुदा-ए-मुअज़्ज़म[23]! रहें आप शादां[24]

+++

न जानामि योगं जपं नैव पूजा, नतोऽहम् सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम्।
जरा-जन्म-दु:खौघ-तातप्य-मानं, प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो॥ 8 ॥

(8)

किसी योग को जप न पूजा को जानूँ, हूँ सज्दे में मुझको संभालो ऐ शम्भू!
वफ़ातो-विलादत[25] के इस सिलसिले में, मैं जलता हूँ मुझको बचा लो ऐ शम्भू!

+++

रूद्राष्टकं इदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये
ये पठन्ति नरा भक्त्याम् तेषां शंभु प्रसीदति॥
यह रुद्राष्टकम जो पढ़ें सच्चे मन से, हमेशा रहें मिहरबां उनपे शम्भू
ख़फ़ा हों अगर, तो भी यह हम्द सुन कर, लुटा दें ख़ुशी का जहाँ उनपे शम्भू

1. सर्व व्यापक 2. मोक्षदाता 3. निस्पृह 4. महाप्रतिष्ठित 5. दानशील और सत्यवादी 6. ईश्वर में तल्लीन 7. ज्ञान, विद्या और इन्द्रियों की पहुँच से आज़ाद 8. विकराल 9. गुणों का ख़ज़ाना, कृपालु और नित्य(अमर) 10. सौन्दर्य, प्रकाश और ज्वाला का भन्डार 11. लहराती 12. चाँद 13. नयन और भवें 14. दयावान 15. प्रसन्न मुख वाले 16. केवल 17. सर्वोत्तम 18. अनंत और सम्पूर्ण 19. कल्याणकारी 20. स्थाई 21. इलाज 22. जीवात्माओं का दिल 23. श्रेष्टतम ईश्वर 24. प्रसन्न 25. जन्म और मृत्यु

मज़े-मज़े में :

फ़ेसबुक : भक्तों का अरण्यरोदन

राकेश अचल (वरिष्ठ पत्रकार और लेखक)

'फेसबुक' को बीती रात अल्प पक्षाघात हुआ तो पूरी दुनिया में फेसबुक के भक्त विचलित हो गए। लगा कि जैसे किसी ने उनकी जान ही छीन ली हो। मै भी इस भक्त-मंडली का सदस्य था लेकिन फेसबुक के शांत होने के बाद मैंने भी चैन की सांस ली। मैंने बहुत कम अवसरों पर देखा है, जब लोग किसी चीज के लिए इतने परेशान और फिक्रमंद होते हैं। फेसबुक तो कोई चीज भी नहीं है। एक सेवा है किन्तु अपनी उपयोगिता की वजह से आज दुनिया के एक बड़े हिस्से के लिए प्राणवायु बन गयी है।

दुनिया में जिंदगी के लिए जैसे भोजन-पानी और आक्सीजन आवश्यक हैं वैसे ही अब यह सोशल मीडिया एक आवश्यक अवयव बन गया है। अकेले फेसबुक दुनिया के 1560 मिलियन लोग फेसबुक की सेवाओं से जुड़े हैं और ऐसे जुड़े हैं कि कुछ समय के लिए ही फेसबुक के बंद होने से सदमे की स्थिति में पहुँच गए। फेसबुक के हितग्राहियों की दशा ऐसी हो गयी जैसे किसी सांप के मुंह से उसकी मणि छीन ली गयी हो या किसी मछली को पानी से निकाल कर गर्म रेत पर फेंक दिया हो। जाहिर है कि फेसबुक ने बीस साल में ही जनमानस पर अपना इतना प्रभुत्व बना लिया है कि लोग उसके आदी हो गए हैं और एक पल भी 'फेसबुकाये' बिना नहीं रह सकते।

फेसबुक 'अनंग' है। फेसबुक को शैव सम्प्रदाय का कोई 'हैकर' ही अपनी तीसरी आँख से भस्म कर सकता है लेकिन हमेशा के लिए नहीं। फेसबुक की मारक क्षमता से समाज ही नहीं बल्कि सियासत भी बुरी तरह से प्रभावित हो रही है बावजूद इसके फेसबुक अपनी जगह है। उसे मिटाने की, 'हैक' करने की तमाम कोशिशें बार-बार नाकाम हो जाती है। 5 मार्च 2024 को भी ऐसी ही कोशिशें नाकाम हुईं और लोगों ने चैन की सांस ली। सवाल यह है कि गुण-दोषों से भरी फेसबुक आम आदमी की जिंदगी का अभिन्न हिस्सा बन कैसे गयी? इसके लिए हम खुद जिम्मेदार है। हमारी सियासत जिम्मेदार है। जिन्होंने लगातार ऐसी परिस्थितियां पैदा की जिनकी वजह से इंसान आपस में कटता चला गया। संवाद की सूरत लगातार कम होती चली गयी।

आज फेसबुक है तो दूसरी तमाम बुक्स बेकार हैं। फेसबुक आज का सबसे बड़ा और सबसे ज्यादा लोकप्रिय महाग्रंथ बन चुका है। फेसबुक किसी से भेदभाव नहीं करता। फेसबुक की अपनी दुनिया है। अपने कानून हैं। अपने तौर-तरीके हैं। फेसबुक की अपनी कोई भाषा नहीं है। फेसबुक अपने उपयोगकर्ताओं को अपनी पसंद की भाषा चुनने का अवसर देती है। फेसबुक का अपना लोकतंत्र है, अभिव्यक्ति की अपनी स्वतंत्रता है, हालाँकि इसके अपने मापदंड हैं, सीमाएँ है।

फेसबुक भी अभिव्यक्ति की आजादी को एक सीमा के बाद पाबंद करती है किन्तु उस तरीके से नहीं जिस तरीके से आज दुनिया में तमाम धार्मिक और लोकतांत्रिक सरकारें कर रही हैं। फेसबुक दुनिया के तमाम सत्ता प्रतिष्ठानों के लिए खतरा है। इसीलिए जब तब दुनिया के तमाम देशों की सरकारें फेसबुक को प्रतिबंधित करने के लिए इंटरनेट को ही बंद करा देती हैं। हमारे हिन्दुस्तान में तो ये सब आये दिन होता रहता है।

कहते हैं कि आवश्यकता ही आविष्कार की जननी होती है,सो इसी तरह अमेरिका के एक कालेज छात्र मार्क जुकरबर्ग की मित्रों से जुड़े रहने की जरूरत ने 2004 में फेसबुक को जन्म दिया था जो आज दुनिया के एक के बाद एक हिस्से की जरूरत बन चुकी है। दुनिया के तमाम लोग जुकरबर्ग के शुक्रगुजार हैं फेसबुक बनाने के लिए। फेसबुक दुनिया का ऐसा मेला है जहाँ दशकों से गुम हुए लोग आपस में मिल जाते हैं। ये काम आसान काम नहीं है। फेसबुक ने मनुष्य के एकांत में दखल किया है। मनुष्य को अवसाद से बचाया भी है और सामाजिक सुरक्षा भी दी है, साथ ही अश्लीलता, घृणा भी परोसी है। फेसबुक गोपनीयता के लिए खतरा भी है और समाज को पारदर्शिता की ओर भी ले जाती है। यानि फेसबुक एक दोधारी तलवार है। यह ऐसा उस्तरा भी है जो यदि बंदर के हाथ लग जाये तो हजामत बनने के बजाय गर्दन काटने का भी काम कर सकती है।

फेसबुक के अनेक रूप है। फेसबुक दवा भी है और जहर भी। फेसबुक मनोरंजन भी देती है और विकृति भी। फेसबुक के पास दोस्ती और दुश्मनी के लिए पर्याप्त समय है। फेसबुक राजनीतिक हस्तक्षेप भी करती है और निजता पर डाका भी डालती है। फेसबुक नशा भी है और नशामुक्ति भी। फेसबुक के समर्थक भी हैं और विरोधी भी। फेसबुक आबाल-वृद्ध सबकी मित्र है। सबकी अभिभावक भी है। सबकी हमराह,हमजुल्फ, हमदर्द, हमजोली यानि सब कुछ है। फेसबुक किसी के लिए गीता है तो किसी के लिए कुरआन। किसी के लिए बाइबल है तो किसी के लिए कुछ और। इतना रूतबा और व्यापकता शायद किसी दूसरे माध्यम के पास नहीं हैं।

फेसबुक से आप मनोरंजन, ज्ञानार्जन, व्यवसाय, महिमा मण्डन, मन मर्दन और मानमर्दन जो चाहे सो कर सकते है। यह आपके ऊपर है कि आप फेसबुक का कैसे इस्तेमाल करना चाहते है। दुनिया में जैसे विभिन्न प्रकार के नशे से मुक्ति के लिए अभियान चलाये जाते हैं उसी तरह फेसबुक से मुक्ति के लिए भी अभियान चलाये जाते हैं। कुछ लोग 31 मई को 'फेसबुक छोडो दिवस' के रूप में भी मानते हैं। कुल मिलाकर फेसबुक आज मनुष्य जीवन की प्राणवायु है। इस पर जब-जब खतरा मंडराता है दुनिया बेचैन हो जाती है। इसलिए जरूरी है कि आप फेसबुक से मुहब्बत करते हुए भी इसका कोई न कोई विकल्प खोजकर रखिये अन्यथा खुदा न खास्ता किसी दिन फेसबुक समाप्त हुई उस दिन आपकी दुनिया भी आपको समाप्त होती सी नजर आएगी।

हालांकि मैंने किसी अवतारी को अभी तक अवतार नहीं माना है फिर भी मैं फेसबुक को कलियुग का असली अवतार मानता हूँ। आइये, हम सब फेसबुक की सलामती के लिए समवेत होकर ईश्वर से, हैकरों से प्रार्थना करें कि वे इस पाकीजा उपक्रम से छेड़छाड़ न करें और ईश्वर इसे लम्बी उम्र दे।

हिन्दी संस्थाओं की पतनगाथा-6

संसदीय राजभाषा समिति

डॉ. अमरनाथ

लेखक कलकत्ता विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष है। सम्पर्क–ईई-164/402, सेक्टर-2, साल्टलेक, कोलकाता-700091 ईमेल: amarnath.cu@gmail.com मो. 9433009898

भारत के तीस सांसदों का भारी भरकम और असीमित शक्ति संपन्न संगठन। राजभाषा के स्वस्थ विकास के लिए पिछले सात दशकों से निरंतर संघर्षरत, किन्तु हिन्दी है कि पिछड़ती ही जा रही है। वह न तो सरकारी कार्यालयों में इस्तेमाल करने योग्य भाषा बन सकी और न अधिकारियों -कर्मचारियों की स्नेह-भाजन। मंच पर लोग अंग्रेजी और रोमन के बरक्स हिन्दी और देवनागरी के गुण गाते नहीं थकते और गुण गाते हुए ही अपना कार्यकाल पूरा करके गुणगान का दायित्व अगली संसदीय समिति को सौंपकर अपने सफल पारी के लिए परम संतुष्टि का अनुभव करते हैं।

संविधान सभा ने 14 सितंबर 1949 को मुंशी-आयंगर (के.एम. मुंशी तथा एन. गोपालस्वामी आयंगर) फार्मूले के आधार पर देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी को भारत संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया और भारतीय अंकों के अंतरराष्ट्रीय स्वरूप को अंकों के रूप में मान्यता दी। संविधान लागू होने के बाद से अगले पंद्रह वर्ष की कालावधि के लिए हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा के प्रयोग को भी यथावत जारी रखने का प्रावधान किया गया। यह उम्मीद की गयी थी कि पंद्रह वर्ष के भीतर हिन्दी को इस लायक बना लिया जाएगा कि वह अंग्रेजी की जगह ले लेगी। संविधान सभा के ज्यादातर सदस्य गाँधी जी के नेतृत्व में आजादी की लड़ाई लड़ते हुए जेल जा चुके थे और अंग्रेजों की पुलिस के डंडे खा चुके थे। 'राष्ट्रभाषा हिन्दी' की प्रतिष्ठा को वे आजादी की लड़ाई का ही हिस्सा मानते थे। ऐसी दशा में इस तरह की उम्मीद पालना स्वाभाविक भी है। अकारण नहीं है कि भाषा के मुद्दे पर होने वाली बहस में ही संविधान सभा का सबसे ज्यादा समय खर्च हुआ था। यद्यपि पंद्रह वर्ष की इस अवधि में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए अपेक्षित कदम उठाने के लिए सरकार को पूरी छूट थी फिर भी संविधान सभा ने विवेकपूर्ण निर्णय लेते हुए इस संबंध में संविधान के अनुच्छेद-344 में राजभाषा आयोग तथा संसदीय राजभाषा समिति के गठन का प्रावधान किया।

राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद 344(1) के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए 7 जून 1955 को हिन्दी के विकास एवं प्रयोग के संबंध में सिफारिशें करने के लिए श्री बालगंगाधर खेर की अध्यक्षता में एक आयोग नियुक्त किया। खेर आयोग ने 31 जुलाई 1956 को अपना प्रतिवेदन भी राष्ट्रपति को सौंप दिया। आयोग की प्रमुख सिफारिशें इस प्रकार थीं–

1. भारत की जनतांत्रिक पद्धति को ध्यान में रखते हुए अखिल भारतीय स्तर पर सामूहिक माध्यम के रूप में अंग्रेजी को स्वीकार करना संभव नहीं है। भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही अनिवार्य शिक्षा देने की संभावनाओं पर विचार करना चाहिए। प्रशासन को सार्वजनिक जीवन एवं दैनिक कार्यकलापों में विदेशी भाषा का प्रयोग करना उचित नहीं है।

2. बहुमत द्वारा बोली तथा समझी जाने वाली हिन्दी पूरे देश के लिए एक सुस्पष्ट भाषा माध्यम है।

3. 14 वर्ष की उम्र तक के प्रत्येक विद्यार्थी को हिन्दी का उचित ज्ञान प्राप्त कराया जाना चाहिए।

4. सारे देश में माध्यमिक शिक्षा के स्तर तक हिन्दी का शिक्षण अनिवार्य कर दिया जाए। हिन्दी भाषा क्षेत्र के विद्यार्थियों के लिए एक दूसरी दक्षिण भारतीय भाषा का ज्ञान अनिवार्य किया जाना आयोग को मान्य नहीं है।

5. सभी विश्वविद्यालयों को चाहिए कि हिन्दी माध्यम से जो विद्यार्थी परीक्षा में बैठना चाहें उनके लिए वे उचित प्रबंध करें।

6. वैज्ञानिक एवं तकनीकी शिक्षण संस्थाओं में यदि सब विद्यार्थी एक भाषायी वर्ग के हों तो उनकी भाषा के माध्यम से ही उन्हें शिक्षा दी जाए और यदि विभिन्न भाषायी क्षेत्रों के हों तो हिन्दी भाषा को ही सामान्य माध्यम के रूप में अपनाया जाए।

7. प्रशासनिक कर्मचारियों के लिए हिन्दी की निश्चित अवधि में आवश्यक ज्ञान प्राप्त करने के लिए नियम लागू किए जाएं और ऐसा न करने वालों को दंडित किया जाए।

8. जनता से सीधा संबंध रखने वाले विभागों और संगठनों में आंतरिक कार्यों में हिन्दी और जनता से व्यवहार हेतु क्षेत्रीय भाषा व्यवहार में लायी जाय।

9. राज्य और संघ सरकार के अधिकारियों के लिए किसी स्तर का हिन्दी ज्ञान अनिवार्य किया जाए और इसके लिए उन्हें अधिकाधिक पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया जाए।

10. स्वीकृत सरकारी कानून हिन्दी में ही होने चाहिए, परंतु जनता की सुविधा के लिए क्षेत्रीय भाषाओं में उनके अनुवाद प्रकाशित किये जाने चाहिए

11. देश में न्याय, देश की भाषा में किया जाए, जिसके लिए यह जरूरी है कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की समस्त कार्यवाई तथा अभिलेखों, निर्णयों और आदेशों के आवश्यकतानुसार क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद भी संलग्न किए जाएं।

12. अखिल भारतीय और केन्द्रीय सेवाओं हेतु कर्मचारियों के लिए हिन्दी की योग्यता रखना आवश्यक किया जाए। इन परीक्षाओं में हिन्दी का अनिवार्य प्रश्न पत्र रखा जाए, परंतु अहिन्दी भाषी विद्यार्थियों की सुविधा की दृष्टि से उसका स्तर अतिसाधारण रहे।

उल्लेखनीय है कि पद्मभूषण बाल गंगाधर खेर (1888-1957) प्रख्यात वकील, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी तथा बंबई राज्य के मुख्य मंत्री रह चुके थे। आयोग के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने जो सुझाव दिये थे उन्हें यदि यथासमय लागू कर दिया गया होता तो आज देश की राजभाषा की दशा काफी अलग होती। किन्तु, खेर आयोग के सुझावों को 1957 में गठित संसदीय समिति के हवाले कर दिया गया ताकि उनकी जाँच करके संसदीय समिति अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति को दे। उल्लेखनीय है कि संविधान के अनुच्छेद 344 (4) के अनुसार सितंबर 1957 में 30 सांसदों (20 लोकसभा तथा 10 राज्यसभा के सदस्य) की संसदीय राजभाषा समिति गठित की गई जिसकी पहली बैठक 16 नवंबर 1957 को हुई। तत्कालीन गृहमंत्री गोविन्द वल्लभ पंत की अध्यक्षता वाली इस संसदीय समिति ने व्यापक विचार-विमर्श के बाद 8 फरवरी 1959 को राष्ट्रपति के सामने अपना जो प्रतिवेदन पेश किया उसमें से खेर आयोग की सिफारिशों की आत्मा निकाल ली। उदाहरण के लिए खेर आयोग ने सिफारिश किया था कि प्रशासनिक कर्मचारियों के लिए हिन्दी का निश्चित अवधि में आवश्यक ज्ञान प्राप्त करने के लिए नियम लागू किये जाएँ और ऐसा न करने वालों को दंडित किया जाय। संसदीय समिति ने दंड के इस प्रावधान को अस्वीकार कर दिया। इतना ही नहीं, संसदीय समिति ने यह भी सुझाव दिया कि अखिल भारतीय सेवाओं और उच्चतर केन्द्रीय सेवाओं में भर्ती के लिए परीक्षा माध्यम के रूप में अंग्रेजी का प्रयोग जारी रहना चाहिए और हिन्दी को कुछ समय बाद वैकल्पिक माध्यम के रूप में शामिल किया जाना चाहिए। प्रतिवेदन पर 2 से 4 सितंबर 1959 तक लोकसभा में और 8 व 9 सितंबर 1959 को राज्य सभा में बहस हुई। 4 सितंबर 1959 को लोकसभा में प्रधान मंत्री ने वक्तव्य दिया जिसमें सदन को आश्वस्त किया कि जबतक अहिन्दी भाषी क्षेत्र अंग्रेजी भाषा के प्रयोग को बंद करने पर राजी न हो जाएं, इस संबंध में समय सीमा की कोई बंदिश नहीं होगी। इसके बाद 10 मई 1963 को राजभाषा अधिनियम 1963 लाया गया। इस अधिनियम की धारा-3 में यह प्रावधान किया गया कि संविधान के प्रारंभ से 15 वर्ष की कालावधि के समाप्त हो जाने पर भी हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा, नियत तिथि से ही संघ के उन सब प्रयोजनों के लिए, जिनके लिए वह, उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लायी जाती थी, संसद में कार्य के संव्यवहार के लिए प्रयोग में लायी जाती रहेगी।

हद तो यह हुई कि इसी अधिनियम में यह भी प्रावधान कर दिया गया कि अधिनियम की धारा-3 के उपबंध तबतक प्रवृत रहेंगे जबतक उनमें वर्णित प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिए ऐसे सभी राज्यों के विधान मंडलों द्वारा, जिन्होंने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संकल्प पारित नहीं कर दिये जाते।

क्या इतिहास को देखते हुए इस बात का अनुमान किया जा सकता है कि तमिलनाडु जैसे राज्य अपने विधान मंडल में हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार करने जैसा संकल्प पारित कर सकेंगे? मुझे तो आगे दूर-दूर तक ऐसी कोई संभावना दिखायी नहीं देती।

पंत समिति की सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद 344(6) के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए केन्द्र सरकार के कार्यालयों के कामकाज में हिन्दी को प्रतिस्थापित किये जाने के लिए प्रारंभिक उपायों के संबंध में 27 अप्रैल 1960 को एक आदेश जारी किया। इस आदेश में शब्दावली निर्माण, केन्द्रीय अधिनियमों, नियमों आदि के हिन्दी अनुवाद तथा केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों को हिन्दी में प्रशिक्षित करने की व्यवस्था की गई।

राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा-4 के अनुसार अधिनियम की धारा-3 के प्रवृत्त होने के दस वर्ष बाद अर्थात् जनवरी 1976 में नई संसदीय समिति गठित हुई। इस संसदीय समिति का काम था, संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी के प्रयोग में की गयी प्रगति की समीक्षा करना और उनपर सिफारिशें करते हुए राष्ट्रपति को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करना। इसके बाद से संसदीय समितियाँ नियमित रूप से गठित होती रही हैं और कहा जा सकता है कि वे 'निष्ठा' के साथ अपना काम भी करती रही हैं क्योंकि, अपने काम से वे पूरी तरह संतुष्ट रही हैं। हिन्दी ही अपनी 'जड़ता' छोड़ने को तैयार नहीं है तो इसमें संसदीय समितियों का क्या दोष? अबतक संसदीय समितियों के जो अध्यक्ष रहे हैं वे कोई मामूली लोग नहीं थे। उनमें ओम मेहता, चौधरी चरण सिंह, एच. एम. पटेल, ज्ञानी जैल सिंह, पी. सी. सेठी, एस. बी. चौहाण, बूटा सिंह, मुफ्ती मोहम्मद सईद, इन्द्रजीत गुप्त, लालकृष्ण अडवाणी, शिवराज वी. पाटिल और पी. चिदंबरम जैसे नामी-गिरामी लोग थे। आज भी यह जिम्मेदारी हमारे गृहमंत्री अमित शाह सँभाल रहे हैं।

संसदीय समितियाँ समय-समय पर केन्द्र सरकार के सभी उपक्रमों में हिन्दी की प्रगति की जाँच करती हैं। उनका कार्य क्षेत्र बहुत व्यापक है और अधिकार भी। वे सरकार द्वारा समय-समय पर जारी किये गये राजभाषा से संबंधित परिपत्रों, आदेशों-अनुदेशों आदि की प्रगति की जाँच तो करती ही हैं, विश्वविद्यालयों में शिक्षा के माध्यम, केन्द्र सरकार की सेवाओं में भर्ती परीक्षाओं के माध्यम, केन्द्र सरकार के कर्मचारियों के सेवाकालीन प्रशिक्षण और विभागीय परीक्षाओं के माध्यम आदि जैसे अन्य विषयों की भी जाँच पड़ताल करती हैं। वे जाँच के लिए अमूमन पाँच सितारा होटलों में बैठकें करती हैं, कभी प्यार से तो कभी डाँटकर अधिकारियों को नसीहतें देती हैं। वे जाँच करती हैं कि पिछले एक वर्ष में कार्यालय में कुल कितनी टिप्पणियाँ लिखी गईं उनमें कितनी हिन्दी में लिखी गईं और कितनी

अंग्रेजी में लिखी गईं। हिन्दी में लिखी गई टिप्पणियों की संख्या और उनका प्रतिशत भी कार्यालय प्रमुखों को बताना पड़ता है। इतना ही नहीं, कार्यालय द्वारा वर्ष भर में कितनी चिट्ठियाँ भेजी गईं और उनमें हिन्दी में कितनी भेजी गईं, उसे भी। संसदीय समितियाँ सुझाव देती हैं कि सभी नेम प्लेट द्विभाषी होने चाहिए, पत्राचार दोनों भाषाओं में होना चाहिए। राजभाषा में सुंदर रंगीन विभागीय पत्रिकाएं निकलनी चाहिए, हिन्दी पखवारा तथा हिन्दी सप्ताह धूमधाम से मनाया जाना चाहिए। कर्मचारियों और अधिकारियों के बीच अलग-अलग निबंध आदि की प्रतियोगिताएं होनी चाहिए, उन्हें राजभाषा में काम करने के लिए प्रोत्साहन मिलना चाहिए, उन्हें अच्छे पुरस्कार दिए जाने चाहिए आदि। पिछले लगभग सात दशक से ये काम नियमित रूप से हो भी रहे हैं, किन्तु राजभाषा जरूर टस से मस होने को तैयार नहीं है। हाँ, इतना लंबा समय बीत जाने तथा राजभाषा के नाम पर जनता के अरबों रूपये खर्च हो जाने के बावजूद आज भी संसदीय समिति अपनी उपलब्धियों की जाँच करने-कराने को बिल्कुल तैयार नहीं है।

संसदीय राजभाषा समिति, गृह मंत्रालय द्वारा केन्द्र सरकार के मंत्रालयों, विभागों, संबद्ध और अधीनस्थ कार्यालयों, स्वायत्त निकायों व बैंकों/ उपक्रमों/ संस्थानों आदि में हिन्दी के प्रयोग से संबंधित निरीक्षण प्रश्नावली राजभाषा विभाग की वेबसाइट पर उपलब्ध है। यह काम इतना बड़ा है कि प्रत्येक हिन्दी सेल का सारा समय यह डाटा तैयार करने में ही चला जाता होगा, मानो यही साध्य हो।

संसदीय समितियाँ अपने सुझावों के अबतक नौ खंड राष्ट्रपति को सौंप चुकी हैं। जाहिर है राष्ट्रपति ने उनपर कार्यवाहियाँ भी की होंगी। इनसे सरकारी काम-काज में हिन्दी को कितनी जगह मिली है यह किसी से छिपा नहीं है। हमारे संपर्क के अनेक हिन्दी अधिकारी हैं जो बताते हैं कि कागजों में उन्हें 80-90 प्रतिशत काम हिन्दी में होता हुआ दिखाना पड़ता हैं जबकि हकीकत में 10 से 15 प्रतिशत भी नहीं होता है। वे झूठी प्रगति रिपोर्ट देने के लिये बाध्य हैं और इस तथ्य से सभी वाकिफ हैं, संसदीय समितियाँ भी।

संसदीय राजभाषा समिति का कार्यालय 11, तीनमूर्ति मार्ग, नई दिल्ली-11 में स्थित है।

प्रेरक

1. जयकिशोर प्रधान

ओडिशा के जयकिशोर प्रधान ने 1974 में एमबीबीएस की प्रवेश परीक्षा दी लेकिन सफल नहीं हुए। इसके बाद उन्होंने बी एस सी की, अध्यापक बने, बाद में बैंक से सेवानिवृत्त हुए। 2020 में 64 वर्ष की आयु में एमबीबीएस की प्रवेश परीक्षा पास की। अब वे ओडिशा के बुरला के सरकारी मेडिकल कॉलेज में अध्ययन रत हैं। उनका कहना है कि पढ़ाई के बाद वे गरीबों के लिए काम करेंगे।

2. नेगा सांगवान

यूक्रेन में मेडिकल की पढ़ाई कर रही नेहा सांगवान ने खतरनाक हालात में भी वहाँ से निकालकर भारत आने से मना कर दिया क्योंकि उसका मकान मालिक युद्ध में गया हुआ है। ऐसे में वह मकान मालकिन और उसके तीन बच्चों को छोड़कर कैसे आ सकती है।

क्या नेहा की यह संवेदना हमें जाति-धर्म, नस्ल, राष्ट्र की संकीर्ण सीमाओं से ऊपर उठकर जीव मात्र से हमारे रिश्ते को एक नई परिभाषा नहीं देती ?

एक बार विचार करके देखें।

बधाई

1. सामंता हार्वे

ब्रिटिश लेखिका सामंता हार्वे ने अपने महत्त्वाकांक्षी और खूबसूरत उपन्यास 'ऑर्बिटल' के लिए 2024 का मेन बुकर पुरस्कार जीता है। इसे अंतरिक्ष पर आधारित पहला उपन्यास कहा जा सकता है जो छह अंतरिक्ष यात्रियों की 24 घंटे की कहानी है।

2. गुकेश डी

भारत के गुकेश डी सिंगापुर में खेले गए मैच में चीन के विश्व चैंपियन खिलाड़ी डिंग लीरेन को हराकर शतरंज के विश्व सबसे कम उम्र के विजेता बन गए हैं। बहुत बहुत बधाइयाँ।

3. मदन बी. लोकुर

सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायाधीश जस्टिस मदन बी. लोकुर को संयुक्त राष्ट्र आंतरिक न्याय परिषद का अध्यक्ष नियुक्त किया गया है. उनकी नियुक्ति का कार्यकाल तत्काल प्रभाव से 12 नवंबर 2028 तक का रहेगा।

संज्ञा-संख्या

शशिकान्त जोशी

PracticalSanskrit.com | Facebook.com/PracticalSanskrit.com

संस्कृत लेखन में एक बहुत रोचक रीति है जिसमें किसी संख्या को किसी अन्य प्रसिद्ध संज्ञा से बतलाया जाता है। जैसे चन्द्र एक ही होता है, सूर्य एक ही होता है, आँखें दो होती है, और गुण तीन। इसी तरह से अलग अलग संख्याओं के लिए भी जो प्रसिद्ध संज्ञाएँ हैं, आइए आज हम उनको देखते हैं। ये हमें साहित्य और ऋषियों की सोच के रुचिकर पहलुओं के बारे में भी बताएँगी।

~ एक ~

❶ **परमात्मा** ❶ **विष्णु** = जो सबमें व्याप्त है ❶ **चंद्र** ❶ **क्षिति** = धरती ❶ **गणेशदंत** = गणेश जी को एकदंती भी कहते हैं ❶ **सूर्य** ❶ **इन्द्र** ❶ **यम**

~ दो ~

❷ **नदी-कूल** = नदी के दो किनारे ❷ **असि-धारा** = दुधारी तलवार या चाकू की धार ❷ **राम-पुत्र** = लव और कुश ❷ **चक्षु** = आँखें ❷ **हस्त** = हाथ ❷ **स्तन** ❷ **अश्विनीकुमार**

~ तीन ~

❸ **काल** = त्रिकाल भूत, वर्तमान, भविष्य ❸ **अग्नि** = गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिण; या "भू भुवः स्वः" में क्रमशः आग, बिजली और सूर्य ❸ **भुवन** = भू, भुवः, स्वः (पृथ्वी, आकाश, स्वर्ग लोक ; या स्वर्ग, भू, नरक लोक) ❸ **शिव-चक्षु** = सूर्य, शशांक, वह्नि जो क्रमशः दिन, रात और अज्ञान में प्रकाश करते हैं; शिवजी के त्रिलोचन, त्र्यम्बक आदि नाम हैं ❸ **गुण** = त्रिगुण सत्त्व, रजस, तमस ❸ **ग्रीवा-रेखा** = गले को झुकाने से उस पर पड़ने वाली रेखाएँ ❸ **कालिदास-महाकाव्य** = रघुवंश, कुमारसंभवम्, मेघदूत ❸ **वलि** = त्रिवली, उदर पर पड़ने वाले तीन बल जो सौन्दर्य के द्योतक हैं ❸ **संध्या** = त्रिसंध्या - सुबह, दोपहर, शाम ❸ **पुर** = त्रिपुर, मय द्वारा निर्मित सोने, चांदी और लोहे के बने पुर ❸ **राम** = परशुराम, राम, बलराम ❸ **संताप** = त्रिविध ताप – आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक जिनका कारण क्रमशः स्वयं, अन्य प्राणि या प्रकृति हैं

~ चार ~

❹ **वेद** = ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद ❹ **ब्रह्मास्य** (ब्रह्मा के मुख) = ब्रह्मा के चार मुख ❹ **वर्ण** = ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र मनोविज्ञान के हिसाब से किसी भी समाज में पाए जाने वाले चार मूल प्रकृति के मनुष्य ❹ **हरि-बाहु** = विष्णु की चार भुजाएँ ❹ **स्वर्दंती-दन्त** = ऐरावत, स्वर्ग के हाथी के चार दांत (चतुष्दन्ती) ❹ **सेना के अंग** = पैदल, हाथी, घोड़ा, रथ ❹ **उपाय** = (नीति) साम, दान, भेद, दण्ड ❹ **याम** = दिन या रात के चार प्रहारों में से एक ❹ **युग** = सत्य (कृत), त्रेता, द्वापर, कलि ❹ **आश्रम** = ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास ❹ **वृत्त-पाद** = किसी छंद के चार चरणों (पादों) में से एक

~ पाँच ~

❺ **पांडव** = युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव ❺ **शिवास्य** (शिव के मुख) ❺ **इंद्रिय** = ज्ञानेंद्रियाँ (कान, नाक, आँख, जीभ, त्वचा) या कर्मेंद्रियाँ (हाथ, पैर, वाणी, गुदा, उपस्थ) ❺ **व्रताग्नि** = दक्षिण, गार्हपत्य, आहवनीय, सभ्य, आवसथ्य ❺ **महापाप** = ब्रह्महत्या, सुरापान, चोरी, गुरुपत्नीगमन और इनके करनेवाले का साथ देना ❺ **महाभूत** = पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश ❺ **महामख** = महायज्ञ – ब्रह्मयज्ञ (पढ़ना, पढ़ाना), पितृयज्ञ (तर्पण), देवयज्ञ (हवन), भूतयज्ञ (बलिविश्वदेव), मनुष्ययज्ञ (अतिथि सत्कार) ❺ **पुराण-लक्षण** = सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर, वंशानुचरित ❺ **प्राण** = प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान ❺ **वटी** = पंचवटी - अश्वत्थ, बिल्व, वट, धात्री, अशोक ❺ **बाण (शर, इषु)** = कामदेव के पाँच बाण - सम्मोहन, उन्माद, शोषण, तापन, स्तम्भन

~ छः ~

❻ **अंग** = देह के छः भाग - दो पैर, दो बाहु, एक सिर, एक मध्य ❻ **वेदांग** = वेद के छः भाग - शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद, ज्योतिष ❻ **दर्शन** = सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदान्त ❻ **कार्तिकेय-मुख** = षडानन कार्तिकेय के छः मुख होते हैं ❻ **ऋतु** = वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर ❻ **रस** = कटु (लहसुन, प्याज, हींग का स्वाद), अम्ल (आंवले सा खट्टा), मधुर (मीठा), लवण (नमकीन), तिक्त (करेले का कड़वा), कषाय (कसैला)

~ सात ~

❼ **तल** (पाताल) = अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल, पाताल ❼ **भुवन (लोक)** = भुः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम् ❼ **मुनि (ऋषि)** = (प्रथम 'स्वयंभू' मन्वन्तर के) मरीचि, अत्रि, अङ्गिरस्, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ ❼ **सूर्य-अश्व** = वेदों में बहुप्रचलित छंद - गायत्री (८,८,८), बृहती (८,८,१२,८), उष्णिह् (८,८,१२), जगती (१२,१२,१२,१२), त्रिष्टुभ् (११,११,११,११), अनुष्टुभ् (८,८,८,८), पंक्ति (८,८,८,८,८) ❼ **वार** = रवि, सोम, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि ❼ **स्वर** = षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत, निषाद् ❼ **वह्नि-शिखा** = आग की सात लपटें (सप्त-जिह्व) काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, सुधूम्रवर्णा, उग्रा, प्रदीप्ता ❼ **पर्वत** = (कुल-पर्वत) महेंद्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्षवान, विंध्य, पारियात्र (अरावली) ❼ **मातृ** = ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा

~ आठ ~

❽ **योग** के अंग = यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि ❽ **वसु** = (इस मन्वन्तर के) धर, ध्रुव, सोम, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष, प्रभास ❽ **शिव-मूर्ति** = रुद्र, शर्व, पशुपति, उग्र, अशनि, भाव, महादेव, ईशान ❽ **दिक्** (दिशा) = (केवल भूमि पर, two-dimensional) पूर्वा, अग्नेयी, दक्षिणा, नैर्ऋती, पश्चिमा, वायवी, उत्तर, ईशानी ❽ **दिग्गज** = ऐरावत, पुण्डरीक, वामन, कुमुद, अञ्जन, पुष्पदन्त, सार्वभौम, सुप्रतीक ❽ **दिक्पाल** = इन्द्र, वह्नि, यम, नैर्ऋत, वरुण, वायु, कुबेर, ईश ❽ **सिद्धि** = अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व ❽ **लक्ष्मी** = आदि-लक्ष्मी, धन, धान्य, गज, संतान, वीर, विद्या, विजय ❽ **ब्रह्म-श्रुति** = (मुख्य उपनिषद) ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, मांडूक्य, तैत्तिरिय, ऐतरेय ❽ **व्याकरण** = (पाणिनी से पहले) ऐन्द्र, चान्द्र, काशकृत्स्न, कौमार, शाकटायन, सारस्वत, अपिशल, शाकल (और भी, पाणिनीय **अष्टा**ध्यायी में **आठ** अध्याय हैं)

~ नौ ~

❾ **शरीर-द्वार** = दो कान, दो आँख, दो नासिका छिद्र, एक मुख, एक गुदा, एक उपस्थ ❾ **कृत-रावण-मस्तक** = रावण के नौ मस्तक अधिक करे गए थे (कृत) जो ब्रह्मा की तपस्या में उसने काट भी दिए थे ❾ **रस** = (मूड) शृङ्गार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, भीभत्स, अद्भुत, शान्त ❾ **ग्रह** = (जो ग्रहण करे, गुरुत्वाकर्षण से अपनी ओर खींचे) सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर (शनि), राहु, केतु

~ दस ~

❿ **अंगुली** ❿ **रावण-मस्तक** ❿ **अवतार** = मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्की ❿ **विश्वदेव** = वसु, सत्य, क्रतु, दक्ष, काल, काम, धृति, कुरु, पुरूरवा, माद्रव ❿ **अवस्था** = (प्रेमियों की) दृङ् (देखना), मन (चिंतन), संग, सङ्कल्प, जागर (नींद न आना), कृशता (शरीर का दुबलापन), अरति (अरुचि), ह्रीत्याग (बेशरमी), उन्माद, मूर्छान्त ❿ **इंद्रिय** = ज्ञानेंद्रियाँ (कान, नाक, आँख, जीभ, त्वचा) और कर्मेंद्रियाँ (हाथ, पैर, वाणी, गुदा, उपस्थ) ❿ **दिक्** (दिशा) = पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, उत्तर-पूर्व, उत्तर-पश्चिम, दक्षिण-पूर्व, दक्षिण-पश्चिम, ऊपर, नीचे

नारी शक्ति

डॉ. सुधा कुमारी
(वरिष्ठ विचारक)

नारी सर्वशक्तिमान की सबसे सुन्दर जीवित रचना है जिसे एक कोमल और मनोरम बाह्य रूप, रचनात्मक मस्तिष्क और स्नेह भरा दिल मिला है। सर्वशक्तिमान ने उसे जन्म देने और पालन-पोषण करने की विशेष प्राकृतिक शक्ति सौंपी है। सभी संस्कृतियाँ और समाज जीवन में नारी के महत्त्व को स्वीकार करते हैं। लेकिन पितृसत्तात्मक समाज के लोभ और अहंकार से उपजी जटिलताओं और कुटिलताओं ने नारी को अपनी प्राकृतिक 'संपत्ति' माना– इतनी कीमती संपत्ति कि उसे अपने नियंत्रण में करने के लिए एक जुनून होता है। इस कीमती संपत्ति पर नियंत्रण खोने के डर से पितृसत्तात्मक समाज नारी को कभी मुक्त नहीं होने देता। उसे हमेशा नियंत्रण में कस कर रखने के लिए और मनुष्य की स्वतंत्रता की धारणा को नीचा दिखाने के लिए नारी पर 'मोरल पुलिसिंग' या नैतिकता का खंजर का सख्ती से अभ्यास किया जाता है। जहाँ एक आदमी को खाने, पीने, कपड़े पहनने, घूमने, शादी करने और काम करने की पूरी आजादी है वहीं एक नारी को अक्सर समाज की नैतिक अनुमति लेने के लिए मजबूर किया जाता है कि कैसे कपड़े पहने, कहाँ और किसके साथ घूमे, किससे शादी करे, कहाँ और क्या काम करे।विवाह और प्रेम पर सामाजिक रूढ़ियाँ

विभिन्न ग्रंथों को पढ़ने और स्नोव्हाइट और सिंड्रेला, लैला-मजनू, रोमियो-जूलियट, सोहनी-महिवाल जैसी कथाओं को पढ़ने के बाद, यह चौंकानेवाला तथ्य सामने आता है कि विवाह की धारणा प्रेम की धारणा से बहुत अलग है। प्रत्येक समाज विवाह को दो अजनबियों के बीच एक पारिवारिक, सामाजिक और पवित्र बंधन के रूप में परिभाषित करता है और पुजारियों की उपस्थिति में धार्मिक समारोहों के साथ विवाह किया जाता है। सामाजिक जीवन में विवाह की उपस्थिति इतनी प्रबल है कि सभी कानूनी दस्तावेजों में 'वैवाहिक स्थिति' नामक एक विशेष अनिवार्य कॉलम होता है। नौकरी के आवेदन, आयकर रिटर्न, पासपोर्ट, चुनावी नामांकन– हर जगह याद दिलाया जाता है– शादी। कोई भी महान व्यक्ति हो, उसकी जीवनी वैवाहिक जानकारी के बिना पूरी नहीं होती। दुनिया में सबसे शक्तिशाली भावना, जिसे 'प्रेम' (प्रणय) कहा जाता है, को भी शादी (परिणय) के बिना कोई सामाजिक या धार्मिक मान्यता नहीं मिलती है। कितना भी पवित्र प्रेम हो, उसे तभी सफल माना जाता है जब वह विवाह में परिणत हो। लेकिन बिना प्रेम के शादी होने और पूरे विवाहित जीवन में प्रेम न होने पर भी शादी को सामाजिक और धार्मिक– दोनों तरह की मान्यता प्राप्त है। कुछ समाजों में विवाह मनुष्य के सात जीवन के लिए एक बंधन के रूप में माना जाता है। जिस विवाह में प्रेम न हो, उसके प्रति सम्मान विकसित करना नारी के लिए मुश्किल होता है और वह सिर्फ सामाजिक अपराधियों से बचने के लिए एक अनिवार्य बंधन के रूप में सहन किया जाता है। फिर भी, सामाजिक और धार्मिक स्वीकृति मिलने के कारण विवाह एक मजबूत संस्था के रूप में जाना जाता है और प्रेम से अधिक पवित्र माना जाता है। हालांकि शादी में 'जीवन साथी' की धारणा को उदारतापूर्वक दुहराया जाता है, लेकिन इसकी असली तस्वीर बहुत अलग है। हर समुदाय में विवाह पत्नी को पति के कब्जे की 'संपत्ति' और उसके अधीनस्थ के रूप में परिभाषित करता है, न कि जीवन साथी की तरह। शादी के दौरान और बाद के रीति-रिवाज प्रेम के सिद्धांत के बिल्कुल विपरीत हैं। प्यार में आपसी प्यार और सम्मान के आधार पर साथी बनते हैं। प्रेम कथाओं के नायक का यह विशिष्ट दृश्य है कि वह नायिका को लुभाने के लिए और उसे पाने से पहले जीवन भर उसके पीछे भागता है, यहाँ तक कि उसके बिना मरने की कसम भी खा लेता है। लेकिन उसे पाने और शादी के बाद तस्वीर अचानक पूरी तरह से और भयानक रूप से बदल जाती है जहाँ नायक उस नायिका के जीवन का कमांडर-इन-चीफ बन जाता है। पति बनते ही नायक का सम्मान नायिका के सम्मान से बहुत ऊपर हो जाता है। अब नायिका को कसम दिलाई जाती है कि वह नायक की आज्ञाकारी सेवक बनकर जीवन भर उसके पीछे दौड़े। भारत में बहुत सारे रीति-रिवाज हैं जिसने पत्नी पर अधीनस्थ बनने का सामाजिक दबाव डाला है। यह स्पष्ट नहीं है कि पत्नी उसके अधीनस्थ के रूप में कैसा महसूस करती है– दिल की रानी की तरह या दासी की तरह। लेकिन यह एक स्पष्ट है कि इस तरह के रीति-रिवाज न केवल पति के सामने बल्कि अपने बच्चों के सामने भी पत्नी का सम्मान कम कर देते हैं, जो अपनी माँ को अपने पिता के बराबर नहीं बल्कि अपने जैसे अधीनस्थ के रूप में पाते हैं। इस कारण ये बच्चे अपने जीवन में नारी के प्रति सम्मान विकसित नहीं कर पाते हैं।कुछ सामाजिक व्यवस्थाएँ स्त्री को देवी कहती हैं मगर उसे कभी भी स्वतंत्र नहीं होने देती और सदा पुरुष संरक्षण की चेतावनी देती हैं। ऐसे ही समाज सामाजिक अपराध को उचित ठहराते हैं और इसका दोष नारी पर मढ़ देते हैं। कुछ सामाजिक व्यवस्थाओं में पत्नी को 'शरीक-ए-हयात' (जीवन-साथी) कहा जाता है, लेकिन वह पुरुष के अधीन होती है। साथ ही,चार पत्नियों और तत्काल तलाक का तरीका विवाह जैसी संस्था को कमजोर और तुरत टूटनेवाला बना देता है। एक अन्य सामाजिक व्यवस्था में पत्नी और पति की वास्तविकता को बयान करती है एक प्रसिद्ध पंक्ति: "वह (पुरुष) स्वयं ईश्वर के लिए, वह (पत्नी) उसमें स्थित ईश्वर के लिए।" यानी सर्वशक्तिमान की उपासना करने में भी नारी को सक्षम नहीं माना जा रहा बल्कि उसे पुरुष की उपासना करने को कहा गया। आपने POTUS (संयुक्त राज्य

अमेरिका के राष्ट्रपति) और FLOTUS (संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रथम महिला) जैसे संक्षिप्त अक्षर (ऐक्रोनिम) सुने होंगे। लेकिन संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे मजबूत और आजाद देश में– जहाँ विमेंस लिब आन्दोलन आया-आज तक मैडम प्रेसिडेंट की कोई मिसाल नहीं है। नारी को कमजोर, अपने पति श्रीमान कखग की छाया और अधीनस्थ के रूप में मानने की मानसिकता और पितृसत्ता (पैट्रियार्की) पुरुषों द्वारा महिला कैंडिडेट को गले लगाने और चूमने तो देती हैं मगर जीतकर मैडम प्रेसिडेंट बनने के लिए कोई स्थान नहीं देती है। भारत के पास ऐसा कोई संक्षिप्त अक्षर (ऐक्रोनिम) नहीं है और उसे पिछले 74 वर्षों में कम से कम एक मैडम प्रेसिडेंट औरएक मैडम प्राइम मिनिस्टर पाने का अवसर मिला है। यूरोप, न्यूजीलैंड, उत्तर अमरीकी महाद्वीप और अफ्रीका– यहाँ तक कि एशिया के श्रीलंका और बांगलादेश जैसे छोटे देशों में भी मैडम प्रेसिडेंट और मैडम प्राइम मिनिस्टर की मिसाल कायम है। इतिहास गवाह है कि जिस समाज में अहंकार है और उसका मुखिया अपने को 'ही-मैन' समझता है, वहाँ न्याय, नारी और नैतिकता सदैव खतरे में है। ऐसे अहंकारी देशों के पड़ोसी देश भी खतरे में रहते हैं। विवाह की प्राचीन भारतीय धारणा स्वयंवर और दुल्हन की सहमति पर आधारित थी। श्रम के विभाजन के साथ, आदमी कमाने वाला बन गया और नारी घर और चूल्हे की प्रबंधक बन गई। पुरुष पर आर्थिक निर्भरता के बावजूद नारी को सम्मान मिला। लेकिन मध्ययुगीन काल के बीच, सामाजिक कुरीतियों ने सामाजिक ताने-बाने को नष्ट कर दिया। लड़की को अपनी आय कमाने के लिए न तो माता-पिता और न ही ससुराल वालों सेकोई वित्तीय संपत्ति मिली। केवल आकस्मिक सुरक्षा के लिए कुछ गहने ही स्त्रीधन के रूप में दिए गए। बाद में महिला पढ़-लिख कर प्रगति के मार्ग पर आगे बढ़ी, सरकारों ने महिला के लिए साक्षरता दर और विवाह की आयु बढ़ा दी। नारी के शिक्षा प्राप्त करने और अपनी आय अर्जित करने के बाद अर्थव्यवस्था में भी प्रगति हुई। अब यह आवश्यक था कि समाज भी प्रगति करे और बदल जाए जिससे समाज की गाड़ी के सभी पहिये संतुलित रहें। लेकिन ये बदलाव नहीं हुआ। विवाह-प्रणाली और समाज– दोनों ही अर्थव्यवस्था और नारी की प्रगति के साथ मेल नहीं खा सके। महिला को विकास के मार्ग पर आगे और उच्च शिक्षित छोड़कर वे खुद प्राचीन और अविकसित बने रहे। इससे समाज की गाड़ी के सभी पहिये बेमेल और असंतुलित हो गए हैं। इन वर्षों में, इस बेमेल ने गर्भ से लेकर कब्र तक कई सामाजिक दुष्ट प्रथाओं को जन्म दिया। इनमे से कुछ नाम हैं– कन्या भ्रूण हत्या, निरक्षरता, बाल विवाह, दहेज की समस्या और मृत्यु, घरेलू हिंसा, महिलाओं के खिलाफ सामाजिक अपराध, परित्याग और गुजारा भत्ता के मुद्दे, कार्यस्थल पर शोषण और भेदभाव, नियम-क़ानून बनाने और सामाजिक निर्णय लेने में उन्हें हाशिए पर रखना, गरीबी और आर्थिक असमानता। दहेज विरोधी, हिंसा विरोधी, भेदभाव विरोधी, कन्या भ्रूण हत्या विरोधी और संपत्ति के उत्तराधिकार जैसे संवैधानिक सुरक्षा उपायों और विधायी उपायों के बावजूद ये सभी सामाजिक दुष्ट प्रथाएँ चलती रही हैं। तीन तलाक को भारत में अब अमान्य कर दिया गया है लेकिन इस बदलाव का विरोध अभी भी होता है। कुछ डॉक्टरों का कहना है कि कई महिलाएँ लड़की नहीं चाहती हैं और उन्होंने स्वयं कन्या भ्रूण हत्या का सहारा लिया है। यह केवल इस बात की पुष्टि करता है कि जीवनदाता का अपना जीवन कितना भयानक रहा होगा कि अपनी बच्ची के जीवन की बजाय मृत्यु को चुनना पड़ा है। शेक्सपियर ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'जूलियस सीजर' में कहा है–"प्रिय ब्रूटस, गलती हमारे सितारों में नहीं बल्कि खुद हममें है!" जब जीवनदाता लड़के को पैदा करने के लिए परिवार के दबाव के कारण असुरक्षित महसूस करती है और अपना कन्या-भ्रूण समाप्त करती है, तो निश्चित रूप से हमारे सिस्टम में भारी गड़बड़ है।

कानूनी और आर्थिक उपाय

भारत और बाहर विदेशों में समाज ज्यादातर पितृसत्तात्मक है। इसकी संरचना महिलाओं की रक्षा करने के लिए बनाई गयी थीं न कि उन्हें प्रतिबंधित या संकुचित करने के लिए। लेकिन वास्तव में पितृसत्ता ने अतिवाद के चरम तत्वों को फैलाया है जो महिलाओं की स्थिति को पुरुष के सामने गौण और संकुचित कर दिया है। इसकी प्रतिक्रिया के रूप में, समाज को नारीवाद (फेमिनिज्म) की घटना को देखना पड़ा। महिलाओं के लिए वास्तविक जागरण 20वीं सदी में 8 मार्च, 1908 को आया जब अमेरिकी कपड़ा मिलों की महिला मजदूरों ने काम के घंटे कम करने और मजदूरी बढ़ाने की अपनी मांग पूरी की। यह एक ऐतिहासिक दिन था जिसे अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में घोषित किया गया। इसके बाद, सभी सरकार और भारत सरकार उनकी समस्याओं से निपटने के लिए लगातार काम कर रही है। विवाह की न्यूनतम आयु बढ़ाई गई, उत्तराधिकार कानूनों में संशोधन किया गया। राष्ट्रीय महिला आयोग और राष्ट्रीय महिला कोष जैसे स्वायत्त संगठन केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के तत्वावधान में बनाए गए। महिला स्वास्थ्य, साक्षरता और उनकी देखभाल पर ध्यान दिया गया। घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 को सुरक्षा अधिकारियों के प्रावधान के साथ हिंसा के मामले दर्ज करने और पीड़िता की काउंसलिंग के लिए लागू किया गया था।

पत्तियों और शाखाओं पर नहीं जड़ पर प्रहार करें

यदि हम ध्यान से देखें, तो सामाजिक दुष्ट प्रथाएँ वास्तव में हमारे आर्थिक मैट्रिक्स में गहराई से निहित एक बहुत बड़ी समस्या– सभी संपत्तियों और संस्थानों पर पुरुष का अधिकार-की अभिव्यक्ति हैं, जो न तो समतावादी है और न ही लोकतांत्रिक। नेक नीयत और सरकार द्वारा उठाए गए कदमों के बाद भी उपरोक्त सभी समस्याएँ जस की तस बनी हुई हैं। क्यों? क्योंकि समस्या की जड़ अभी भी अछूती है। चूंकि पूरे समाज की संरचना और महिलाओं के बारे में सामाजिक धारणा नहीं बदली है, इसलिए समस्याओं की जड़ अभी भी मौजूद है। पितृसत्ता (पुरुषवाद) और नारीवाद (फेमिनिज्म)– दोनों ही दो चरम सीमाएँ हैं। और हम जानते हैं कि थीसिस-एंटी-थीसिस-सिन्थेसिस यानी क्रिया-प्रतिक्रिया-संश्लेषण एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। पितृसत्ता के लंबे अत्याचार (थीसिस) के बाद नारीवाद (एंटी-

थीसिस) आ चुका और उसके बाद अब संश्लेषण (सिन्थेसिस) का समय आ गया है। वह समय आ गया है जब हमें एक समतावादी और न्यायवादी समाज की ओर बढ़ना होगा जो पूरे समाज के आपसी सम्मान, समर्थन और सहयोग पर आधारित हो और एक दूसरे को जगह दे। चूंकि सामाजिक समस्याएँ किसी बड़ी आर्थिक अस्वस्थता की अभिव्यक्ति हैं, इसलिए जब हम आर्थिक मुद्दों को हल करेंगे तो ये सामाजिक समस्याएँ अपने आप गायब हो जाएँगी।

विवाह और संपत्ति के अधिकारों में सुधार

'बेटी को शादी में दे देना' की पुरानी व्यवस्था– एक गृहिणी की अवधारणा– पर आधारित थी जिसमें कोई आर्थिक स्वतंत्रता नहीं थी। इसलिए यह पुरानी सामाजिक धारणा के अनुकूल था कि माता-पिता और ससुराल- दोनों उसे भोजन, कपड़ा और आश्रय जैसे निर्वाह के साधन प्रदान करे और उससे पूर्ण निष्ठा की मांग करे। पुरानी व्यवस्था में, दहेज या 'दायज' शादी के समय बेटी को स्वैच्छिक उपहार था क्योंकि शादी के बाद, माता-पिता के घर से लड़की के लिए गर्भनाल काट दी जाती थी और उसके बाद माता-पिता के घर में उसका कोई आर्थिक दावा नहीं होता था। उसे अपनी पैतृक संपत्ति विरासत में नहीं मिलती थी और अपने माता-पिता की देखभाल की भी कोई जिम्मेदारी नहीं थी। शादी के बाद लड़की का आर्थिक अस्तित्व शादी में खो गया था। यह एक पुरुष से अलग था जिसने शादी के साथ, शादी के बिना और शादी के बावजूद पैतृक संपत्ति पर अपना अधिकार बरकरार रखा था। आज समय बदल गया है। अब वह हमेशा एक आश्रित रहनेवाली गृहिणी नहीं है बल्कि अपने माता-पिता की देखभाल करने वाली आर्थिक रूप से स्वतंत्र महिला भी है। फिर भी दहेज की मांग की जाती है। क्यों? कारण यह है कि पैतृक संपत्ति पर उसका अधिकारऔर अनुकूल कानून के बावजूद वह उसमें हिस्सेदारी का दावा नहीं करती है। वह ससुराल की संपत्ति में हिस्सेदारी का दावा करती है। इससे ससुराल पक्ष के मन में आक्रोश और असुरक्षा की भावना पैदा होती है। वे उसे अपनी संपत्ति के भावी दावेदार के रूप में स्वीकार करने से पहले एकमुश्त दहेज की मांग करते हैं। इसलिए संपत्ति कानूनों को सख्ती से लागू किया जाना चाहिए ताकि लड़की को माता-पिता की संपत्ति विरासत में मिल सके और वह संपत्ति पति को न मिले। फिर उसे अपने भाइयों की तरह अपने माता-पिता देखभाल भी करनी चाहिए। यह उपाय दहेज के मुद्दों और परिणामों का मुकाबला करेगा। संक्षेप में, विवाह दो परिवारों का मिलन होना चाहिए न कि किसी महिला को माता-पिता के परिवार से अलग करना। शादी के बाद, उसकी संपत्ति उसी की रहनी चाहिए जिससे वह अपना और अपने माता-पिता का भरण-पोषण कर सके, जैसे एक आदमी अपनी संपत्ति को अपने और अपने परिवार के कल्याण के लिए रखता है। पति और पत्नी अपने परिवार के लिए एक साझा कोष बना सकते हैं लेकिन उन्हें माता-पिता और सास-ससुर दोनों की देखभाल करनी चाहिए। फिर असफल विवाह के मामले में लड़की को गुजारा भत्ता के लिए संघर्ष नहीं करना पड़ेगा। यह उपाय पारिवारिक अदालतों पर दबाव कम करने के मुद्दों का मुकाबला करेगा।एक और सुधार चाहिए। विवाह में एक साथी को बिल्कुल शक्तिशाली और दूसरे को बिल्कुल कमजोर नहीं बनाना चाहिए। पत्नी को साथी की बेवफाई का मुकाबला करने के लिए कानूनी शक्ति देना होगा। आज एक विवाहित पुरुष के पास ऐसे अधिकार हैं जो पत्नी को उपलब्ध नहीं हैं। मंगलसूत्र (पति द्वारा पत्नी के गले में बांधा गया सोने का पवित्र धागा) आज पत्नी के लिए वफादारी दिखने के एक बंधन की तरह है। पति के लिए ऐसा कोई बंधन नहीं है। वह जितने भी सम्बन्ध बनाए, कोई मंगलसूत्र का बंधन नहीं। हम जानते हैं कि– "सत्ता भ्रष्ट करती है और पूर्ण सत्ता बिल्कुल भ्रष्ट करती है।" इसलिए यदि विवाह को एक प्रतिष्ठित संस्था बनाना है तो उसे दोनों भागीदारों को गरिमा और शक्ति देनी होगी। या तो दूल्हा और दुल्हन दोनों को अपनी वैवाहिक स्थिति का उल्लेख करना चाहिए और निष्ठा बनाए रखना चाहिए या कम से कम एक मंगलसूत्र दिखाना चाहिए। इसे सामाजिक सम्मान के लिए केवल पत्नी के पहचान पत्र के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। मानव की स्वतंत्रता का अर्थ किसी एक पक्ष को खुली छूट नहीं होना चाहिए।पत्नी का उपनाम का परिवर्तन या अपने नाम में पति का नाम जोड़ना भी एक मिथ्या भ्रम है क्योंकि यह न तो उसकी मूल जाति और न ही पहचान को बदलता है। लोग उसके माता-पिता का उपनाम जानने पर जोर देते हैं। विवाह टूटना आम होने के साथ, वैवाहिक उपनाम उसकी पहचान को अस्पष्ट बना देता है। उपनाम केवल उसे माता-पिता के परिवार से अलग करने और पति की संपत्ति में अधिकार बनाने, गुजारा भत्ता में मदद करता है। जब उसकी अपनी आय, माता-पिता की विरासत, अपना उपनाम और पति की संपत्ति होगी तो गुजारा भत्ता के मामलों में कमी आएगी। सच पूछा जाय तो जाति या सम्प्रदाय के उपनाम समाप्त कर देना चाहिये और पत्नी को नाम बदलने पर रोक लगाना चाहिए।राष्ट्रीय स्तर पर केंद्र और राज्य सरकारों, गैर-सरकारी संगठनों और सामजिक विशेषज्ञों को विवाह और संपत्ति के अधिकारों में संरचनात्मक परिवर्तनों पर काम करना चाहिए। इसलिए, विवाह और संपत्ति कानूनों की संस्था को सामाजिक विशेषज्ञों द्वारा फिर से विचार करने की आवश्यकता है ताकि सामाजिक व्यवस्था को समतावादी और लोकतांत्रिक बनाया जा सके, जो आपसी सम्मान समर्थन और सहयोग के आधार पर एक दूसरे को स्थान प्रदान कर सके। यह देखना उत्साहजनक है कि कुछ राज्यों में, माता-पिता की संपत्ति बेटियों के बीच भी हस्तांतरित की जा रही है।

'काँच की छत' (ग्लास सीलिंग) तोड़ने के साथ इसकी अवधारणा को भी तोड़ें

महिलाओं को सदा कहा जाता है कि वह एक सीमा तक ही ऊपर उठ सकती है जिसे एक काँच की छत के समान बताया गया है और ये बताया जाता है कि इसके बाहर वह नहीं जा सकती। अब, जब काँच की छत है तो टूटेगी ही। महिलाओं को केवल 'काँच की छत' नहीं तोड़नी है बल्कि 'काँच की छत' की अवधारणा को ही तोड़ देना है। हमें जो समाज विरासत में मिला उसमें काँच की छत थी मगर अब हमें लड़कियों को मजबूत पंख और खुला नील गगन

देना है जिसमें वह पूरी क्षमता के साथ उड़ सके।आज यह जरूरी है क्योंकि वह हर जगह काम कर रही है– सेना, पुलिस, कोर्ट, अस्पताल, एयरपोर्ट, बैंक, कंपनी, इंजीनियरिंग फर्म, कला, खेल, संस्कृति के साथ-साथ घर भी। उनका 'ब्यूटीफुल माइंड' हर जगह नजर आता है। उसे केवल एक सजावटी आकृति के रूप में चित्रित करने के लिए सामंती मानसिकता का समर्थन अब अवांछनीय है। यह एक स्वीकृत तथ्य है कि राज्य की अर्थव्यवस्था, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था और विश्व अर्थव्यवस्था का संतुलित विकास काफी हद तक श्रम शक्ति सहित संसाधनों की पूर्ण गतिशीलता (उपयोग) पर निर्भर करता है। महिलाओं की आबादी कुल आबादी का लगभग 48% है, आर्थिक क्षेत्रों में उनकी पूर्ण भागीदारी सभी देशों के सामाजिक और आर्थिक विकास, सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि के लिए तत्काल आवश्यक है। यह आवश्यक है कि उन्हें स्कूल और कॉलेज में शिक्षा, स्वच्छ शौचालय और वातावरण मिले और आय अर्जित करने के लिए व्यावसायिक मार्गदर्शन प्रशिक्षण, मोबाइल फोन और कंप्यूटर मिले। परिवार की ओर से उन्हें सुरक्षा और सहारा मिले। आर्थिक विकास में उनके योगदान के बारे में लड़के और लड़कियों दोनों को संवेदनशील बनाया जाये। उन्हें समाज के मजबूत खम्भे या हितधारकों के रूप में एक-दूसरे की मदद करने और उनका सम्मान करने के लिए शिक्षित किया जाना चाहिए। उसके उत्पीड़न या शोषण को सही ठहराने वाले किसी भी बयान की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए और ऐसे लोगों को तत्काल दंडित किया जाना चाहिए। उसके महत्त्व की सही धारणा, उसकी क्षमताओं का सही आकलन, शिक्षा का पर्याप्त अवसर और काम की क्षमता का उचित उपयोग राज्य, राष्ट्रीय और विश्व अर्थव्यवस्था के समग्र विकास में विकास के इंजन के रूप में कार्य कर सकता है।

शिक्षा, कार्यबल और निर्णय लेने में महिलाओं की भागीदारी

सभी महिलाएँ ऊर्जा और शक्ति का स्रोत हैं। उनकी जबरदस्त ऊर्जा का उपयोग उत्पादक चैनलों में किया जाना है जिससे जीडीपी, जीएनपी और राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो। इसलिए यह अर्थव्यवस्था, समाज और देश के हित में है कि स्थानीय, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा, कार्यबल और निर्णय लेने वाली संस्थाओं में महिलाओं की पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित हो। सार्वजनिक क्षेत्र में विशेषज्ञ महिला सलाहकारों, डॉक्टरों और प्रतिष्ठित महिलाओं द्वारा उनकी ऊर्जा के सर्वोत्तम उपयोग के लिए नीति को तैयार किया जाना है। मध्यम वर्ग और निम्न आय वर्ग की कामकाजी महिलाओं से भी परामर्श किया जाना चाहिए कि उत्पीड़न या शोषण की शिकायतों के बिना राष्ट्रीय आय में पूर्ण भागीदारी कैसे सुनिश्चित की जाए। काम करने वाले संगठनों और महिलाओं द्वारा उनकी सुरक्षा, दक्षता और गरिमा सुनिश्चित करने के लिए ड्रेस कोड और आचार संहिता हो सकती है। घूंघट सड़क पर चेहरे और शरीर को ढक सकता है, मगर यह कार्य को प्रतिबंधित करता है। राष्ट्रीय आय आर्थिक और भौतिक प्रश्न है, केवल आर्थिक विशेषज्ञों, चिकित्सकों, औद्योगिक विशेषज्ञों और महिलाओं को ही यह तय करना चाहिए कि अर्थव्यवस्था के लिए इष्टतम परिणाम प्राप्त करने के लिए उनके पास क्या क्षमता है। धार्मिक या आध्यात्मिक लोग तनाव और आध्यात्मिक उत्थान, ईश्वर के साथ मिलन के लिए मददगार हो सकते हैं, है, अर्थव्यवस्था के लिए नहीं। हम सभी अच्छी तरह से जानते हैं कि धार्मिक व्यक्ति या भगवान का सच्चा भक्त लाभ, धन संचय या विलासिता नहीं चाहेगा। वह धन को जमा करने के बजाय वितरित करेगा। यही कारण है कि भारत अर्थव्यवस्था या राजनीति को धर्म या अध्यात्म से शासित नहीं होने दे सकता। भारत धर्मनिरपेक्ष देश है और अर्थव्यवस्था के लिए इष्टतम परिणाम प्राप्त करने के लिए एक धर्मनिरपेक्ष देश रहेगा।

कामकाजी और गैर-कामकाजी महिला की अवधारणा

कामकाजी और गैर-कामकाजी महिला की अवधारणा को स्पष्ट करने की जरूरत है। दरअसल, गैर-कामकाजी महिलाओं की अवधारणा गलत है। चाहे वे बाहर काम करें या न करें, जीवन के सभी चरणों में महिलाओं के लिए गृहिणी की भूमिका अनिवार्य है। महिला की पारिवारिक जिम्मेदारी, महिला से अपेक्षाएँ और मांगें इतनी हैं कि उन्हें घर को स्वर्ग या नरक बनाने के लिए पूरी तरह से और विशेष रूप से जिम्मेदार माना जाता है– पुरुष घर को स्वर्ग या नरक बनाने के रडार से बाहर सुरक्षित है। जहाँ एक पुरुष काम के बाद आराम करने और आनंद लेने के लिए घर आता है, वहीं महिला डबल शिफ्ट में काम करने के लिए घर आती है। एक और तनाव बिंदु – पति को भगवान का अवतार मानने की धार्मिक सख्ती– अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुँचा रहा है। ये सामाजिक और धार्मिक बंधन और महिलाओं की अधीनस्थ स्थिति उन्हें बाहर काम करने से रोकती है। ज्यादातर महिलाएँ घर पर ही रहना पसंद करती हैं। दूसरी ओर, सकल घरेलू उत्पाद में गृहिणी के योगदान को ध्यान में नहीं रखा जाता है क्योंकि यह बचत है, न कि कमाई। वास्तव में, इस पर भी बहस हुई और गृहिणी की तुलना एक अनुत्पादक वर्ग से की गई। उसके पूरे जीवन को एक गैर-कामकाजी जीवन के रूप में माना जाता है जो अत्यधिक अपमानजनक है। गृहिणी के योगदान को सजावटी भाषणों में ही पहचाना जाता है जब कोई सफल व्यक्ति होता है। अन्यथा, उसे 'मिसेज सो एँड सो' या 'बेटर हाफ' या पेंशन पाने वाली विधवा की स्थिति से संतुष्ट होना पड़ता है। लेकिन एक गृहिणी को घर पर काम करने और आय अर्जित करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। यह विचार करने का विषय होगा कि क्या मातृत्व अवकाश और चाइल्ड केयर लीव पर महिलाएँ घर से कुछ कार्यालय का काम कर सकती हैं।

ट्रांसजेंडर को रोजगार देना

ट्रांसजेंडरों को सुरक्षा और व्यापक सतर्कता के लिए नियोजित किया जा सकता है। इससे जनता द्वारा महिला पुलिस बल पर हमले और पुरुष पुलिस बल द्वारा महिलाओं पर हमले की दो शिकायतों का समाधान हो सकता है। इससे ट्रांसजेंडर की गरिमा और रोजगार की मांग भी पूरी होगी। इसके अलावा, हम विकास और समृद्धि के लिए सभी मानव संसाधनों का उपयोग कर सकते हैं और कई समस्याओं

का समाधान कर सकते हैं। दरअसल मुगल काल में इन ट्रांसजेंडरों ने अच्छा काम किया था।

मनोरंजन, मीडिया और व्यवसाय की भूमिका

इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया महिलाओं को सकारात्मक प्रकाश में पेश करके महिलाओं के कल्याण के लिए योजनाओं और महिलाओं के सारगर्भित विचारों के बारे में सूचनात्मक लेख प्रकाशित करके रचनात्मक भूमिका निभा सकता है। कपड़ों या शरीर के अनुचित चित्रण और महिलाओं को नीचा दिखाने वाली टिप्पणियों से बचना चाहिए और एक दंडनीय अपराध होना चाहिए। खेल, फिल्मों और मीडिया को सकारात्मक और पक्की खबरें देनी चाहिए और उन पर गपशप या अफवाहें नहीं बेचनी चाहिए। एथलीटों का ड्रेस कोड सम्मानजनक होना चाहिए। दुकानें बाहर गरिमामय कपड़े प्रदर्शित कर सकती हैं और ऐसे कपड़े डिजाइन कर सकती हैं जो शरीर को ढक सकें और उनकी रक्षा कर सकें। यदि शेल्फ पर सभी कपड़े शरीर को अनुचित रूप से प्रकट कर रहे हैं, गरिमामय नहीं हैं तो लड़कियों के लिए बहुत कम विकल्प बचते हैं।असली शक्ति भीतर से आती है

हर महिला को संकल्प लेना चाहिए कि वह कम से कम 10 महिलाओं की मदद करेगी, प्रकाश की तरह बनेगी, ज्ञान का प्रकाश फैलाएगी, परिवार को छाया देने वाले फलदार वृक्ष की तरह बनेगी। महिलाओं को यह भी समझना होगा कि असली शक्ति भीतर से आती है। 'आदिशक्ति' नामक शाश्वत ऊर्जा के कण होने के नाते, उनमें वह आग, वह चिंगारी होनी चाहिए, ऊपर की ओर बढ़ने, मुख्यधारा में शामिल होने और परिवार, राज्य और राष्ट्र के आर्थिक विकास में योगदान देने की ऊर्जा होनी चाहिए।

नोबल पुरस्कार 2024

प्रस्तुति : शिवांगी जोशी

1. भौतिकी

प्राप्तकर्ता : जॉन हॉपफील्ड और जेफ्री हिंटन
उपलब्धि : कृत्रिम तंत्रिका नेटवर्क के साथ मशीन लर्निंग को सक्षम करने वाली आधारभूत खोजों और आविष्कारों के लिए

2. रसायन विज्ञान

प्राप्तकर्ता : डेविड बेकर, डेमिस हसाबिस और जॉन जम्पर
उपलब्धि : कम्प्यूटेशनल प्रोटीन डिजाइन के लिए (डेविड बेकर), प्रोटीन संरचना भविष्यवाणी के लिए (डेमिस हसाबिस और जॉन जम्पर)

3. नोबेल शांति पुरस्कार 2024

प्राप्तकर्ता : निहोन हिडांक्यो (हिबाकुशा)
उपलब्धि : परमाणु हथियारों से मुक्त विश्व बनाने के प्रयासों के लिए तथा गवाहों के बयानों के माध्यम से यह प्रदर्शित करने के लिए कि परमाणु हथियारों का दोबारा कभी उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।

4. फिजियोलॉजी या मेडिसिन

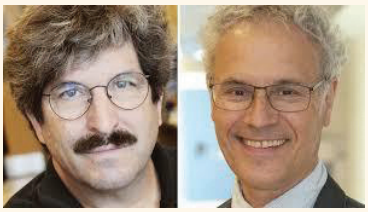

प्राप्तकर्ता : विक्टर एम्ब्रोस और गैरी रुवकुन
उपलब्धि : माइक्रोआरएनए की खोज और जीन विनियमन में इसकी भूमिका

5. साहित्य

प्राप्तकर्ता : हान कांग
उपलब्धि : उनकी गहन काव्यात्मक गद्य के लिए जो ऐतिहासिक आघातों का सामना करती है और मानव जीवन की नाजुकता को उजागर करती है

6. आर्थिक विज्ञान में नोबेल पुरस्कार 2024

प्राप्तकर्ता : डेरॉन ऐसमोग्लू, साइमन जॉनसन और जेम्स रॉबिन्सन
उपलब्धि : इस बात के अध्ययन के लिए कि संस्थाएँ कैसे बनती हैं और समृद्धि को कैसे प्रभावित करती हैं

अंतिम संस्कार

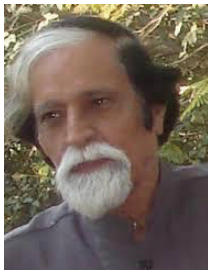

डॉ. रणजीत, बेंगलूरु
मो. 9108792360

जब हम इस सवाल का सामना करते हैं कि अंत्येष्टि का सबसे तर्कसंगत और माननीय तरीका क्या है, तब हमारे सामने सबसे पहले इसके विभिन्न प्रचलित तरीके सामने आते हैं। विभिन्न मानव-समूहों या धर्मावलंबियों में प्रचलित इन तरीकों में तीन स्पष्ट हैं। पहला हिन्दू तथा हिन्दोस्तान में जन्में धर्मों– बौद्ध, जैन, सिक्ख आदि में प्रचलित 'शव-दहन' दूसरा ईसाई, इस्लाम और यहूदी जैसे अब्राहमिक धर्मों में प्रचलित मिट्टी में दफन करने का तरीका। और तीसरा भारत के ईरानी मूल के अग्निपूजक पारसी लोगों में प्रचलित मानवीय गरिमा बोध को चोट पहुँचाने वाला वह तरीका जिसमें अपने मृतक के शव को गिद्ध आदि पक्षियों के नोच खाने के लिए घर की छत पर छोड़ दिया जाता है। एक बहुत ही छोटे अल्पसंख्यक वर्ग का यह तरीका तो आज के किसी भी विचारशील व्यक्ति को स्वीकार्य नहीं लगेगा।

इससे मिलता-जुलता एक और तरीका है अपने शव को नदी, तालाब, समुद्र आदि किसी जलाशय में छोड़ देना। समुद्र और बड़ी नदियों, जहाँ उन्हे शार्क, घड़ियाल आदि जलचर शीघ्र ही चट कर जाते हैं, में कोई हर्ज नहीं है, पर छोटे जलाशयों में उन्हें छोड़ना, उन्हें प्रदूषित करके अन्ततः मानव समाज को ही हानि पहुँचाता है, इसलिए उचित नहीं है।

अब हम मानव-समाज में प्रचलित दो सर्वाधिक स्वीकार्य तरीकों– दहन और दफन के सकारात्मक और नकारात्मक पहलुओं पर आ सकते हैं। दहन, यदि विद्युत शवदाह गृह में किया जाय और उसके साथ जुड़े धार्मिक कर्मकांड छोड़ दिये जाय, तो उसमें कोई बुराई नहीं है। इसीलिए यह यूरोप आदि के विकसित देशों के धर्मनिरपेक्ष मानववादी तर्कशील लोगों में अधिक प्रचलित हो रहा है। पर उसका प्रचलित परंपरागत हिन्दू रूप, चिता में शव-दहन, न केवल वन-रक्षा और उसे फैलने वाले वायु-प्रदूषण की दृष्टि से गलत है, उसके साथ जुड़े हुए भयानक कर्मकांड जैसे कपाल-क्रिया की दृष्टि से भी अस्वीकार्य है।

इसी तरह जमीन में गड्ढा खोद कर मनुष्य के शव को उसमें दफना देना, माटी के इस पुतले को माटी में ही मिला देना, एक सहज स्वाभाविक कार्य है। वहीं घुल मिल जाय तो प्रदूषण की भी कोई समस्या नहीं है। समस्या तब पैदा होती है, जब उस पर कोई समाधि या मकबरा खड़ा किया जाय। यदि प्रत्येक मृतक के लिए मकबरा खड़ा किया तो धरती छोटी पड़ जाएगी। विभिन्न देशों के राष्ट्राध्यक्षों, महान लेखकों, विचारकों, वैज्ञानिकों, कलावंतों और अन्य संस्कृति कर्मियों की कब्रों पर स्मारक बनाए जाने चाहिए। ये नयी पीढ़ियों के लिए प्रेरणासोत होंगे। तो सामान्य मृतकों के लिए क्या किया जाना चाहिए? उन्हें बाबा आम्टे के आनन्द-वन (कुष्ठ-आश्रम) की तरह सड़कों के किनारे दफना कर उन पर एक-एक पेड़ लगा दिया जाना चाहिए। शव उन पेड़ों के लिए खाद बन कर सार्थक हो उठेगा, और वे पेड़ ही उन जनों के स्मारक भी हो जाएँगे। खेतों के मालिक अपने खेत में अपने परिजनों को दफनाएँ, सामान्य जन सड़कों के किनारे और संसार में हरियाली बढाएँ तो यह तरीका विद्युत-दहन से भी अधिक पर्यावरण-रक्षक और मानव-हितैषी ठहरेगा। मानव-जाति के लिए अधिक तर्कसंगत और वरणीय।

मृत्यु के बाद भी मानव-शरीर को सार्थक करने का एक तरीका, जो पिछली कुछ दशाब्दियों में विवेकशील लोगों के बीच लोकप्रिय हुआ है, उसकी चर्चा किये बिना, अन्त्येष्टि पर यह लेख अधूरा ही रहेगा। वह है किसी दुर्घटना में ब्रेनडेड व्यक्ति के अन्य रोगियों के काम आने लायक अंगों का उसके परिजनों द्वारा दान और किसी भी व्यक्ति द्वारा किसी चिकित्सा-संस्थान को मृत्यु से पूर्व वसीयत लिख कर अपनी पूरी देह समर्पित कर देना।

सन 1948 में भारत में एनाटोमी एक्ट पास किया गया, जिनके अनुसार कोई भी दानदाता चिकित्सा और तत्संबंधी शोध के लिए स्थापित चिकित्सा-संस्थानों को अपना शरीर वसीयत कर के दान दे सकता था। इन कानूनों में यह भी प्रावधान है कि ऐसी लावारिस लाश को, जिस पर 48 घंटे तक कोई परिवार दावा न करे, शोध कार्य के लिए कब्जे में लिया जा सकता है। प्रारंभ में कुछ राजनेताओं ने, जिनमें साम्यवादी मुख्यमंत्री ज्योति बसु, बुद्धदेव भट्टाचार्य, सीताराम येचुरी और जनसंघ के नानाजी देशमुख प्रमुख हैं, इस तरह का देहदान किया और तर्कशील लोगों में यह सिलसिला चल पड़ा। पंजाब और हरियाणा में तो अब तर्कशील सोसाइटी के ज्यादातर सदस्य गाजे-बाजे के साथ अपने बुजुर्ग परिजनों के दानित शवों की बारात निकाल कर इन चिकित्सा संस्थानों तक पहुँचाते हैं।

मानव शव के 'अन्तिम संस्कार' या अन्तिम सार्थकता का इससे अच्छा, इससे तर्कसंगत और इससे मानव-हितैषी तरीका और कौन सा हो सकता है?

पुरस्कृत संकलन से एक कविता

गगन गिल

इस वर्ष का साहित्य अकादमी का हिन्दी का पुरस्कार गगन गिल को उनके कविता संग्रह 'मैं जब तक बाहर आई' के लिए घोषित हुआ है।

मैं जब तक आई बाहर

मैं जब तक आई बाहर
एकांत से अपने

बदल चुका था
रंग दुनिया का

अर्थ भाषा का
मंत्र और जप का

ध्यान और प्रार्थना का
कोई बंद कर गया था

बाहर से
देवताओं की कोठरियाँ

अब वे खुलने में न आती थीं
ताले पड़े थे तमाम शहर के

दिलों पर
होंठों पर

आँखें ढँक चुकी थीं
नामालूम झिल्लियों से

सुनाई कुछ पड़ता न था
मैं जब तक आई बाहर

एकांत से अपने
रंग हो चुका था लाल

आसमान का
यह कोई युद्ध का मैदान था

चले जा रही थी
जिसमें मैं

लाल रोशनी में
शाम में

मैं इतनी देर में आई बाहर
कि योद्धा हो चुके थे

अदृश्य
शहीद

युद्ध भी हो चुका था
अदृश्य

हालाँकि
लड़ा जा रहा था

अब भी
सब ओर

कहाँ पड़ रहा था
मेरा पैर

चीख़ आती थी
किधर से

पता कुछ चलता न था
मैं जब तक आई बाहर

ख़ाली हो चुके थे मेरे हाथ
न कहीं पट्टी

न मरहम
सिर्फ़ एक मंत्र मेरे पास था

वही अब तक याद था
किसी ने मुझे

वह दिया न था
मैंने ख़ुद ही

खोज निकाला था उसे
एक दिन

अपने कंठ की गूँ-गूँ में से
चाहिए थी बस मुझे

तिनका भर कुशा
जुड़े हुए मेरे हाथ

ध्यान
प्रार्थना

सर्वम शांति के लिए
मंत्र का अर्थ मगर अब

वही न था
मंत्र किसी काम का न था

मैं जब तक आई बाहर
एकांत से अपने

बदल चुका था मर्म
भाषा का

महान लोग : महान विचार

मार्टिन लूथर किंग जूनियर

मार्टिन लूथर किंग जूनियर, अमेरिका के पादरी, आंदोलनकारी एवं अफ्रीकी-अमेरिकी नागरिक अधिकारों के संघर्ष के प्रमुख नेता थे। उन्हें अमेरिका का गाँधी भी कहा जाता है।

1. प्रेम ब्रह्मांड की सबसे बड़ी शक्ति है। यह नैतिक ब्रह्मांड की धड़कन है। जो प्रेम करता है, वह ईश्वर के अस्तित्व में भागीदार है।

2. बुद्धिमत्ता और चरित्र ही सच्ची शिक्षा का लक्ष्य हैं।

3. सच्ची शांति केवल तनाव की अनुपस्थिति नहीं है; यह न्याय की उपस्थिति भी है।

4. किसी भी व्यक्ति को तुम्हें इतना नीचे मत गिराने दो कि तुम उससे घृणा करने लगो।

5. किसी व्यक्ति का अंतिम मापदंड यह नहीं है कि वह सुविधा और आराम के क्षणों में कहाँ खड़ा है, बल्कि यह है कि वह चुनौती और विवाद के समय कहाँ खड़ा है।

6. हम निराशा के पहाड़ से आशा का पत्थर निकालने में सक्षम हैं।

7. अंधकार को अंधकार दूर नहीं कर सकता; केवल प्रकाश ही ऐसा कर सकता है। घृणा को घृणा दूर नहीं कर सकती, केवल प्रेम ही ऐसा कर सकता है।

8. हमारी वैज्ञानिक शक्ति हमारी आध्यात्मिक शक्ति से आगे निकल गई है। हमारे पास निर्देशित मिसाइलें और गुमराह लोग हैं।

वे दिन : वे लोग

मेहर बाई टाटा

संकलन : शिवांगी जोशी

मेहर बाई ने प्रथम विश्व युद्ध की मंदी के समय टाटा स्टील के मजदूरों की तनख्वाह चुकाने के लिए अपना कोहिनूर जितना कीमती हीरे का हार गिरवी रख दिया था। इनकी केंसर से मृत्यु के बाद उसी हार को बेचकर उनकी स्मृति में टाटा केंसर अस्पताल की स्थापना की गई जहाँ गरीबों का मुफ़्त इलाज होता है।

साहित्य अकादमी युवा पुरस्कार 2024

क्र.सं.	भाषा	पुस्तक का नाम (शैली)	पुरस्कार विजेता का नाम
1.	असमिया	जाल कोटा जुई (लघुकथाएं)	नयनज्योति सरमा
2.	बांग्ला	डेराजे हलुद फुल, गतजन्म (कविता)	सुतापा चक्रवर्ती
3.	बोडो	सैखलुम (लघु-कथाएं)	रानी बारो
4.	डोगरी	इक रंग तेरे रंग चा (कविता)	हीना चौधरी
5.	अंग्रेज़ी	होमलेस: ग्रोइंग अप लेस्बियन एण्ड डिस्लेक्सिक इन इंडिया (संस्मरण)	के. वैशाली
6.	गुजराती	...तो तमे राजी? (ग़ज़ल)	रिंकू राठौड़
7.	हिन्दी	स्मृतियों के बीच धिरी है पृथ्वी (कविता)	गौरव पांडेय
8.	कन्नड़	जीरो बैलेंस (कविता)	श्रुति बी.आर.
9.	कश्मीरी	एने बेडास (लेख)	मो. अशरफ़ ज़िया
10.	कोंकणी	पेडन्याचा समाराम (निबंध)	अद्वेत सालगांवकर
11.	मैथिली	नदी घाटी सभ्यता (कविता)	रिंकी झा रिशिका
12.	मलयालम	मीशाक्कल्लन (लघु कथाएँ)	श्यामकृष्णन आर.
13.	मणिपुरी	अशीबा तुरेल (कविता)	वाइखोम चिंगखेइंगनबा
14.	मराठी	उस्वन (उपन्यास)	देवीदास सौदागर
15.	नेपाली	कैनवास को क्षितिज (कविता)	सूरज चंपागेन
16.	ओडिया	हू बईया (लघु-कथाएँ)	संजय कुमार पांडा
17.	पंजाबी	खत जो लिखनो रह गये (कविता)	रणधीर
18.	राजस्थानी	सुध सोधुन जग अंगने (कविता)	सोनाली सुथार
19.	संथाली	जंगबाहा (कविता)	अंजन कर्मकार
20.	सिंधी	पेपर पर्या (लेख)	गीता प्रदीप रूपानी
21.	तामिल	विष्णु वंधर (लघु कथाएं)	लोकेश रघुरमन
22.	तेलुगू	धावलो (लघु कथाएं)	रमेश कार्तिक नायक
23.	उर्दू	स्टेपनी (लघु-कथाएं)	जावेद अम्बेर मिस्बाही

अकादमी पुरस्कार 2024 (मुख्य)

वर्ग	भाषा	विजेता	कार्य का शीर्षक
कविता	हिन्दी	गगन गिल	मैं जब तक आई बाहर
	पंजाबी	पॉल कौर	सुं गुणवंता सुं बुद्धिवंताः इतिहासनामा पंजाब
	मलयालम	के जयकुमार	-
	मणिपुरी	हाओबाम सत्यबती देवी	-
	गुजराती	दिलीप झावेरी	-
	असमिया	समीर तांती	-
	राजस्थानी	मुकुट मणिराज	-
	संस्कृत	दीपक कुमार शर्मा	-
उपन्यास	अंग्रेज़ी	ईस्टरिन किरे	स्पिरिट नाइट्स
	कश्मीरी	सोहन कौल	मनोरोग वार्ड
	बोडो	अरोन राजा	स्वर्णि ठाखाई
लघु कथाएँ	नेपाली	युवा बराल	छिछीमीरा
	सिंधी	हुंदराज बलवानी	पुर्जो
निबंध	कोंकणी	मुकेश थाली	-
	मैथिली	महेंद्र मलंगिया	-
	ओडिया	बैष्णब चरण समाई	-
खेल	संथाली	महेश्वर सोरन	सेचेड सवंता रेन अन्धा मन्मी
अनुसंधान	तामिल	ए. आर. वेंकटचलपथी	-
साहित्यिक आलोचना	कन्नडा	के वी नारायण	-
	मराठी	सुधीर रसाल	-
	तेलुगू	पेनुगोंडा लक्ष्मीनारायण	-

हमारा संविधान : हमारे शाश्वत मूल्यों का अमृत

26 जनवरी 1950 को विश्व की सर्वाधिक विविधताओं वाले गणतंत्र भारत का संविधान लागू हुआ। छोटी-बड़ी बाधाओं को पार करता हुआ इस वर्ष की इस 26 जनवरी को हमारा संविधान 75 वर्ष पूरे करके आजकल की प्रचलित शब्दावली में 'अमृत-काल' में प्रवेश कर रहा है जबकि दुनिया का तथाकथित सबसे प्रगतिशील संविधान रूस का साम्यवादी स्वरूप 75 वर्ष पूरे होने से पहले की बिखर गया।

यह विश्व का सबसे बड़ा, लिखित-सचित्र संविधान है जो किसी धर्म, पंथ और कट्टरता से ऊपर उठकर इस देश के 5000 वर्ष के सर्वसमावेशी दर्शन, संस्कृति, लोकजीवन और लोक आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करता है। जिसमें मानवता के सभी श्रेष्ठ मूल्य शामिल हैं, जो बिना किसी कुंठा के अपने समस्त लोगों को गरिमापूर्ण जीवन की गारंटी देता है।

जो साक्षात लोक देव भारत के लोगों का, उनके द्वारा सृजित, अनुमोदित और स्वयं को ही आत्मार्पित है।

आस्था, प्रतिबद्धता, प्रेम और श्रेष्ठ मानवीय मूल्यों का समुच्चय।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना

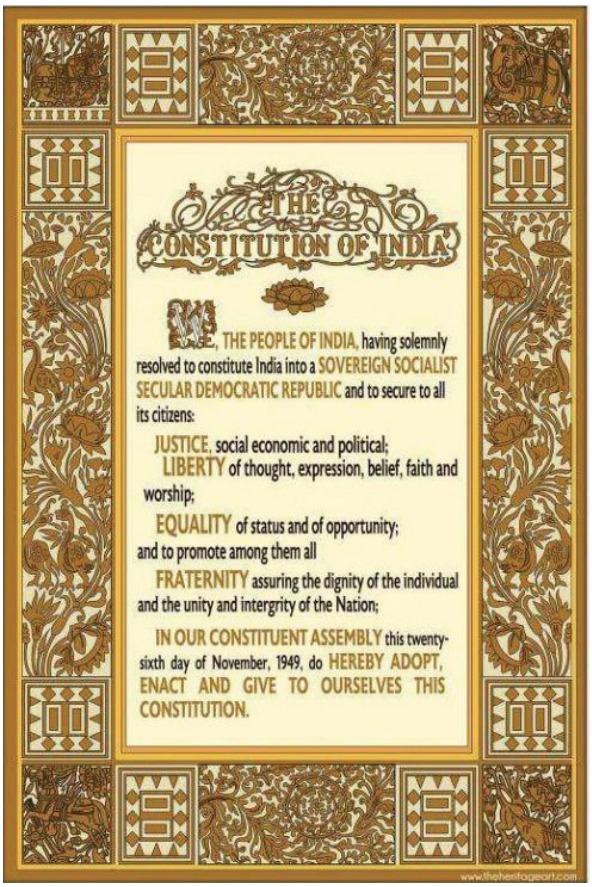

दुनिया का एक मात्र सचित्र संविधान

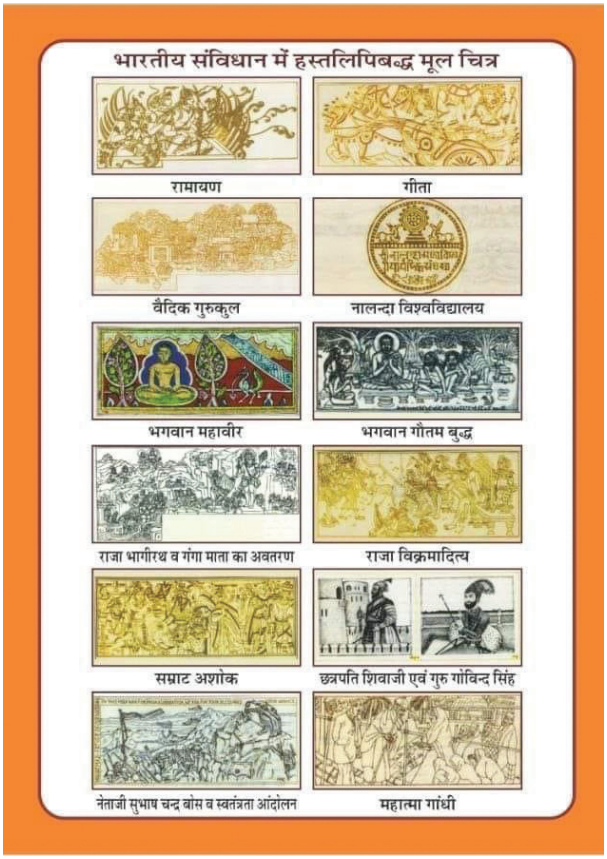

हस्तलिखित प्रति में सांस्कृतिक राष्ट्रभाव वाले 23 चित्र सम्मिलित– संविधान राष्ट्रजीवन की गति का मुख्य दिक्सूचक है। भूमि, जन और शासन से ही राष्ट्र नहीं बनते। जाति, मजहब, राजनीति और क्षेत्रीय आग्रह समाज तोड़ते हैं, संस्कृति ही इन्हें जोड़ती है। भारतीय संविधान निर्माता सनातन सांस्कृतिक क्षमता से परिचित थे। उन्होंने संविधान की हस्तलिखित प्रति में सांस्कृतिक राष्ट्रभाव वाले 23 चित्र सम्मिलित किए। ये चित्र प्रसिद्ध चित्रकार नंदलाल बोस और उनके शिष्यों ने बनाए थे।

मुखपृष्ठ पर राम और कृष्ण तथा

भाग 1. में सिन्धु सभ्यता की स्मृति वाले मोहनजोदड़ो काल की मोहरों के चित्र हैं।

भाग 2. नागरिकता वाले अंश में वैदिक काल के गुरुकुल आश्रम का दिव्य चित्र है।

भाग 3. मौलिक अधिकार वाले पृष्ठ पर श्री राम की लंका विजय व

भाग 4. राज्य के नीति निर्देशक तत्वों वाले पन्ने पर कृष्ण अर्जुन उपदेश वाले चित्र हैं।

भाग 5. में महात्मा बुद्ध,

भाग 6. में स्वामी महावीर और

भाग 7. में सम्राट अशोक के चित्र हैं।

भाग 8 में गुप्त काल,

भाग 9 में विक्रमादित्य,

भाग 10 में नालंदा विश्वविद्यालय,

भाग 11 में उड़ीसा का स्थापत्य,

भाग 12 में नटराज,

भाग 13 में भगीरथ द्वारा गंगावतरण,

भाग 14 में मुगलकालीन स्थापत्य,

भाग 15 में शिवाजी और गुरू गोविन्द सिंह,

भाग 16 में महारानी लक्ष्मीबाई,

भाग 17 व 18 में क्रमशः गाँधी जी की दाण्डी यात्रा व नोआखाली दंगों में शान्ति मार्च,

भाग 19 में नेताजी सुभाष,

भाग 20 में हिमालय,

भाग 21 में रेगिस्तानी क्षेत्र व

भाग 23 में लहराते हिन्द महासागर की चित्रावली है।

संविधान की मूल प्रति को अपने सुलेख में प्रेम बिहारी नारायण रायज़ादा ने लिखा है जिसके लिए उन्होंने कुछ भी पारिश्रमिक नहीं लिया, इस शर्त के साथ कि वे हर पृष्ठ पर अपना और अपने दादाजी का भी नाम लिखेंगे।

भारतीय संविधान की मूल प्रति का हिन्दी (देवनागरी) में लेखन करने वाले वसंत कृष्ण वैद्य

भारत के मूल हस्तलिखित संविधान का संरक्षण

डॉ. राकेश कुमार

पूर्व अध्यक्ष इंडियाना शाखा, email: ihaindiana@gmail.com

भारत का संविधान, देश के लोकतंत्र की नींव का प्रतीक, अपने मूल हस्तलिखित स्वरूप में दो ऐतिहासिक खंडों में मौजूद है, एक अंग्रेज़ी में और दूसरा हिन्दी में। ये अमूल्य दस्तावेज़ नई दिल्ली स्थित संसद पुस्तकालय में संरक्षित हैं और इनका कानूनी, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्त्व अतुलनीय है।

संविधान का प्रारूप तैयार करने की यात्रा 9 दिसंबर 1946 को प्रारंभ हुई, जब संविधान सभा ने पहली बार बैठक की। लगभग तीन वर्षों की सूक्ष्म विचार-विमर्श के बाद, संविधान को 26 नवंबर 1949 को अपनाया गया और यह 26 जनवरी 1950 को प्रभावी हुआ। प्रारंभ में इसमें 22 भाग, 395 अनुच्छेद, और 8 अनुसूचियां थीं, और इसके बाद इसमें 75 संशोधन किए गए हैं।

अंग्रेज़ी संस्करण, जिसे श्री प्रेम बिहारी नारायण रायज़ादा ने बारीकी से हस्तलिखित किया, इसे पूरा करने में 18 महीने लगे। यह उत्कृष्ट कृति 233 शीट्स के हस्तनिर्मित पार्चमेंट पेपर पर तैयार की गई, जिन्हें इंग्लैंड से आयात किया गया था। प्रत्येक शीट का आकार 45.7 सेमी x 58.4 सेमी है और इसका कुल वज़न 13 किलोग्राम है। प्रत्येक पृष्ठ पर श्री नंदलाल बोस द्वारा बनाए गए अद्वितीय चित्रों से सजावट की गई है, जो मोहनजोदड़ो और वैदिक काल से लेकर स्वतंत्रता आंदोलन तक भारत के इतिहास को दर्शाते हैं।

पुणे में बने चर्मपत्र (पार्चमेंट) कागज की 264 शीटों पर बनाए गए हिन्दी संस्करण का वजन 14 किलोग्राम है। श्री बसंतराव वैद्य ने सुलेख एवं अलंकरण का क्रियान्वयन किया। साथ में, इन दस्तावेज़ों पर भारत के संस्थापक नेताओं के हस्ताक्षर हैं, जिन्होंने देश के भविष्य को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

संरक्षण की चुनौती

1980 के दशक के मध्य तक, इन नाज़ुक खंडों को संरक्षित करने की चिंता ने संसद पुस्तकालय को कार्रवाई के लिए प्रेरित किया। सांस्कृतिक संपत्ति संरक्षण के लिए राष्ट्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला (एनआरएलसी) ने दस्तावेज़ों का मूल्यांकन किया और उन्हें अपेक्षाकृत अच्छी स्थिति में पाया। हालांकि, उनकी दीर्घायु सुनिश्चित करने के लिए सक्रिय उपायों की आवश्यकता थी। नई दिल्ली स्थित राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला (एनपीएल) को इन दस्तावेज़ों की सुरक्षा के लिए निष्क्रिय-गैस वातावरण वाले सीलबंद कांच के केस डिजाइन करने का कार्य सौंपा गया।

दृढ़, वायुरुद्ध केस बनाना एक बड़ी चुनौती थी। सिलिकॉन-रबर सील का उपयोग करने के प्रारंभिक प्रयास टिकाऊपन की चिंता और हानिकारक गैसों के उत्सर्जन के कारण विफल रहे। एनपीएल ने केसों में वायु प्रविष्टि मापने के लिए एक हीलियम लीक डिटेक्टर भी विकसित किया। अमेरिकी राष्ट्रीय मानक ब्यूरो (अब राष्ट्रीय मानक और प्रौद्योगिकी संस्थान) द्वारा विकसित तकनीकों पर आधारित सोल्डर सील वाले प्रोटोटाइप केस भी अविश्वसनीय साबित हुए।

नई दिल्ली स्थित फ्रांसीसी दूतावास के सहयोग से, राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला के डॉ. हरि किशन ने सितंबर 1992 से फरवरी 1993 तक फ्रांस का दौरा किया, ताकि वायुरुद्ध कांच के केसों के विकास में तकनीकी सहायता प्राप्त की जा सके। इस दौरान, सेंट-गोबेन कंपनी, पेरिस के समर्थन से, दो केस बनाए गए–एक सोल्डरिंग प्रक्रिया से सीलबंद और दूसरा ओ-रिंग्स का उपयोग करके। इस अध्ययन में निष्कर्ष निकाला गया कि संविधान के दीर्घकालिक संरक्षण के लिए, ओ-रिंग सीलिंग तकनीक सोल्डरिंग विधि से कहीं बेहतर है, क्योंकि सोल्डरिंग सील को लगातार सुरक्षित रूप से बनाना कठिन था।

इसी दौरान, डॉ. किशन को ओ-रिंग सीलिंग तकनीक में तकनीकी सहायता प्राप्त करने के लिए गेट्टी संरक्षण संस्थान (अमेरिका) से संपर्क करने का सुझाव दिया गया। इस चुनौती की जटिलता को पहचानते हुए, एनपीएल ने नवंबर 1992 में गेट्टी संरक्षण संस्थान को सहायता के लिए अनुरोध किया।

सहयोग और नवाचार

राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला (एनपीएल) ने संयुक्त राज्य अमेरिका के गेट्टी संरक्षण संस्थान (जीसीआई) के साथ साझेदारी की, जो सांस्कृतिक रूप से महत्त्वपूर्ण कलाकृतियों के संरक्षण में अपनी विशेषज्ञता के लिए प्रसिद्ध है, ताकि भारत के संविधान के सुरक्षित भंडारण और प्रदर्शन को सुनिश्चित किया जा सके। अपने व्यापक अनुभव, जिसमें शाही ममी संरक्षण परियोजना से प्राप्त अंतर्दृष्टि भी शामिल थी, के आधार पर, जीसीआई ने एनपीएल के साथ मिलकर संविधान के लिए विशेष रूप से डिजाइन किए गए, वायुरुद्ध केसों को डिजाइन, निर्मित और स्थापित किया। यह साझेदारी जुलाई 1993 में एक विस्तृत समझौते के साथ औपचारिक रूप से स्थापित हुई, जिसमें परियोजना के लिए मुख्य डिज़ाइन विनिर्देशों का उल्लेख किया गया था।

डिज़ाइन में दो समान केस शामिल थे, जिनका सटीक आयतन 96,250 घन सेंटीमीटर था, और इन्हें संविधान के अंग्रेज़ी और हिन्दी

संस्करणों को सुरक्षित रूप से रखने के लिए तैयार किया गया था। इन केसों को सावधानीपूर्वक नियंत्रित माइक्रोपर्यावरण बनाए रखने के लिए डिज़ाइन किया गया था, जिसमें नाइट्रोजन वातावरण के साथ 1% से कम ऑक्सीजन मात्रा और 40-50% की सापेक्ष आर्द्रता सुनिश्चित की गई। दस्तावेज़ों की अतिरिक्त सुरक्षा के लिए, संसद पुस्तकालय के लिए एक समर्पित जलवायु-नियंत्रित कक्ष की योजना बनाई गई थी। इस विशेष भंडारण स्थान को पूरे वर्ष 20 °C ± 2 °C का स्थिर तापमान और 30% ± 5% सापेक्ष आर्द्रता बनाए रखने के लिए डिज़ाइन किया गया, जो संरक्षण का एक अतिरिक्त स्तर प्रदान करता है।

(हीलियम गैस में संरक्षित रखी गई भारतीय संविधान की प्रति)

जीसीआई ने अपने यूएस-स्थित मशीन शॉप में केसों के निर्माण की ज़िम्मेदारी ली और परियोजना की कड़ी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए तीन समान यूनिट तैयार किए। प्रत्येक केस ने सील वातावरण की अखंडता सुनिश्चित करने के लिए कठोर ऑक्सीजन-रिसाव परीक्षण पास किए। सफल परीक्षणों के बाद, दो केसों को सावधानीपूर्वक पैक करके मार्च 1994 में नई दिल्ली भेजा गया, जहां उन्हें संसद पुस्तकालय की भंडारण सुविधा में स्थापित और एकीकृत किया गया। यह सहयोगात्मक प्रयास भारत की विरासत के इस आधार स्तंभ को सुरक्षित रखने के प्रति दोनों संस्थानों की प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

स्थापना और परीक्षण

संसद पुस्तकालय में निर्माण कार्य में देरी के कारण, केसों को अस्थायी रूप से संसद भवन के एक साइड रूम में स्थापित किया गया। हालांकि उस कक्ष में जलवायु नियंत्रण की व्यवस्था नहीं थी, लेकिन संसद भवन की स्थिर वास्तुकला ने उपयुक्त पर्यावरणीय परिस्थितियाँ सुनिश्चित कीं। केसों को पॉलिश किए गए स्टेनलेस स्टील के आधारों पर माउंट किया गया था और उन्हें सागौन की लकड़ी से बने कैबिनेट में रखा गया। प्रदर्शन की निगरानी के लिए केसों में ट्रेस-ऑक्सीजन एनालाइज़र लगाए गए थे।

शुरुआत में केसों को शुष्क नाइट्रोजन से फ्लश किया गया, जिससे ऑक्सीजन का स्तर 1000 पीपीएम से नीचे लाया गया। सात महीने की परीक्षण अवधि के दौरान, एक केस में ऑक्सीजन का न्यूनतम रिसाव 5 घन सेंटीमीटर दर्ज किया गया, जबकि दूसरे केस में तीन महीने के दौरान थोड़ा अधिक रिसाव, 109 घन सेंटीमीटर, दर्ज किया गया। इष्टतम परिस्थितियों को बनाए रखने के लिए ऑक्सीजन स्कैवेंजर का उपयोग किया गया। यह प्रदर्शन एनपीएल और जीसीआई, दोनों के कठोर मानकों पर खरा उतरा।

एक स्थायी विरासत

27 अक्टूबर 1995 को भारत के संविधान को औपचारिक रूप से इन अत्याधुनिक केसों में रखा गया। इन केसों को बिना किसी रखरखाव के कम से कम 20 वर्षों तक कार्य करने के लिए डिज़ाइन किया गया था। यह नाइट्रोजन माइक्रोपर्यावरण प्रदान करते हैं, जो दस्तावेज़ों को ऑक्सीकरण, जैविक क्षरण, और वायु प्रदूषण से सुरक्षित रखता है।

भारतीय और अंतरराष्ट्रीय संस्थानों के इस सहयोगात्मक प्रयास ने सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण के महत्त्व को रेखांकित किया है। भारत का संविधान, जो अब आने वाली पीढ़ियों के लिए संरक्षित है, राष्ट्र के लोकतांत्रिक आदर्शों और स्थायी विरासत का एक शक्तिशाली प्रतीक बना हुआ है।

मुख्य स्रोत

1. हरि किशन और शिन माएकावा, भारत के संविधान के मूल दस्तावेजों का संरक्षण, ऑक्सीजन-मुक्त संग्रहालय केस / संपादक: शिन माएकावा, रिसर्च इन कंज़र्वेशन, 1998, ISBN 0-89236-529-3 (Hari Kishan and Shin Maekawa, Preservation of the Original Documents of the Constitution of India, Oxygen-Free Museum Cases / Editor: Shin Maekawa, Research in Conservation, 1998, ISBN 0-89236-529-3.)

2. अस्वाल, डी., और मेहरोत्रा, आर. 'भारत का संविधान': मूल दस्तावेजों का संरक्षण। करंट साइंस। (2018)। (Aswal, D., & Mehrotra, R. 'Constitution of India': Preservation of original. Current Science. (2018).

भारत का संविधान और महिलाएँ

भारत में संविधान के निर्माण में जिन 15 महिलाओं की भागीदारी रही उनके नाम हैं– अम्मू स्वामीनाथन, एनी मैककारेन, बेगम ऐजाज़ रसूल, दक्षायनी वेलायुधन, दुर्गाबाई देशमुख, हंसा जीवराज मेहता, कमला चौधरी, लीला रॉय, मालती चौधरी, पूर्णिमा बनर्जी, राजकुमारी अमृत कौर, रेणुका रे, सरोजिनी नायडू, सुजेता कृपलानी और विजयलक्ष्मी पंडित

भारत की राष्ट्रीय शपथ

राष्ट्रीय शपथ भारत गणराज्य के प्रति निष्ठा की शपथ है। इसे आमतौर पर सार्वजनिक कार्यक्रमों, खासकर स्कूलों में, और स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस समारोहों के दौरान भारतीयों द्वारा एक स्वर में पढ़ा जाता है। यह आमतौर पर स्कूल की पाठ्यपुस्तकों और कैलेंडर के शुरुआती पन्नों में छपा हुआ पाया जाता है। इसे अधिकांश भारतीय स्कूलों की सुबह की सभा में सुनाया जाता है। हालाँकि, यह शपथ भारतीय संविधान का हिस्सा नहीं है किन्तु सनातन भारतीय दर्शन और संविधान की आत्मा इसमें व्याप्त है।

यह शपथ मूल रूप से तेलुगु में लेखक

पिडिमर्री वेंकट सुब्बा राव द्वारा 1962 में लिखी गई थी। इसे पहली बार 1963 में विशाखापत्तनम के एक स्कूल में पढ़ा गया था और बाद में इसका विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद किया गया था।

मूल

"भारत हमारा देश है।
हम सब भारतवासी भाई बहन हैं।
हमें अपना देश
प्राणों से भी प्यारा है।
इसकी समृद्धि और
विविध संस्कृति पर हमें गर्व है।
हम इसके सुयोग्य अधिकारी बनने का प्रयत्न
सदा करते रहेंगे।
हम अपने माता-पिता,
शिक्षकों एवं गुरुजनों का सदा आदर करेंगे
तथा सब के साथ
शिष्टता का व्यवहार करेंगे।
हम अपने देश और देशवासियों के
प्रति सदैव निष्ठावान रहने की प्रतिज्ञा करते है।
उनके कल्याण एवं समृद्धि में ही
हमारा सुख निहित है।"

–जय हिन्द

India is my country
and all Indians are my brothers and sisters.
I love my country
and I am proud of its rich
and varied heritage.
I shall always strive to be
worthy of it.
I shall give my parents,
teachers and all elders respect
and treat everyone with courtesy.

–JAI HIND

रोचक : जन गण मन

तीन बार के ग्रैमी अवार्ड विजेता, भारतीय मूल के संगीतकार राम ज्ञान 'रिकी' केज का अति सुंदर हमारा राष्ट्रगान "जन गण मन..." सुनिये! उन्होंने इसे अपने मूल देश भारत के लोगों को समर्पित किया है। इसे अपने व्हाटस एप ग्रुप्स, फेसबुक, इंस्टाग्राम सब सोशल मीडिया पर सुन और शेयर कीजिये!

इसे भारत के दिग्गज संगीतकारों की संगत मिली है; 100 वाद्ययंत्रों वाला रॉयल फिल्हार्मोनिक (ब्रिटिश) आर्केस्ट्रा साथ में है; और सबसे बड़ी बात कि इसमें 14,000 (चौदह हजार!) आदिवासी बच्चों का सहभाग है. हमारे राष्ट्रगान की इस प्रस्तुति ने गिनीज विश्व रिकॉर्ड बनाया है. भारत के जिन संगीतकारों ने इसे संगत दी है, वे हैं: पं. हरिप्रसाद चौरसिया, राकेश चौरसिया, अमान और अयान बंगश, राहुल शर्मा, जयंती कुमारेश, शेख और कली चाबी महबूब, गिरिधर उडुपा, कलिंगा इंस्टीट्यूट आफ सोशल साइंसेज का भी इसमें योगदान है।

रिकी केज ने लिखा है; "Please share, watch, use, but with respect :-) It is yours now, my humble gift to every Indian everywhere. Jai Hind!"

Happy #IndependenceDay2024

लिंक : https://youtu.be/ZQR33FcstXA?si=vJHymnlLin4ssPof

साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज

भगतसिंह (1928)

(मात्र 24 साल की आयु में फाँसी के फंदे पर झूल जाने वाले आजादी के अप्रतिम योद्धा भगत सिंह एक जुनूनी बलिदानी ही नहीं थे बल्कि एक दृष्टि सम्पन्न लेखक, पत्रकार, विचारक और दार्शनिक भी थे जिन्होंने छोटी सी आयु में किसी भी देश-समाज की दृष्टि से भारत के भविष्य पर अपने विचार अत्यंत स्पष्टता से रखे जो आज भी विभिन्न तरह के कट्टर और विभाजक विचारों से जूझ रही इस दुनिया का मार्गदर्शन कर सकते हैं।

मात्र 21 वर्ष की आयु में छपा उनका यह आलेख हमारे इन विचारों की पुष्टि करता है। किसी भी गणतंत्र में विविधता को साधना और उसे शक्ति में परिवर्तित करना हमेशा एक बड़ी चुनौती होता है।

भारत के गणतंत्र के अमृत-वर्ष में अपने गणतंत्र की सफलता और दीर्घायु की कामना करते हुए उनका यह कालजयी आलेख प्रस्तुत है। -सं.)

1919 के जलियांवाला बाग हत्याकाण्ड के बाद ब्रिटिश सरकार ने साम्प्रदायिक दंगों का खूब प्रचार शुरू किया। इसके असर से 1924 में कोहाट में बहुत ही अमानवीय ढंग से हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए। इसके बाद राष्ट्रीय राजनीतिक चेतना में साम्प्रदायिक दंगों पर लम्बी बहस चली। इन्हें समाप्त करने की जरूरत तो सबने महसूस की, लेकिन कांग्रेसी नेताओं ने हिन्दू-मुस्लिम नेताओं में सुलहनामा लिखाकर दंगों को रोकने के यत्न किये।

इस समस्या के निश्चित हल के लिए क्रान्तिकारी आन्दोलन ने अपने विचार प्रस्तुत किये। प्रस्तुत लेख जून, 1928 के 'किरती' में छपा। यह लेख इस समस्या पर शहीद भगतसिंह और उनके साथियों के विचारों का सार है। – सं.

भारत वर्ष की दशा इस समय बड़ी दयनीय है। एक धर्म के अनुयायी दूसरे धर्म के अनुयायियों के जानी दुश्मन हैं। अब तो एक धर्म का होना ही दूसरे धर्म का कट्टर शत्रु होना है। यदि इस बात का अभी यकीन न हो तो लाहौर के ताजा दंगे ही देख लें। किस प्रकार मुसलमानों ने निर्दोष सिखों, हिन्दुओं को मारा है और किस प्रकार सिखों ने भी वश चलते कोई कसर नहीं छोड़ी है। यह मार-काट इसलिए नहीं की गयी कि फलाँ आदमी दोषी है, वरन इसलिए कि फलाँ आदमी हिन्दू है या सिख है या मुसलमान है। बस किसी व्यक्ति का सिख या हिन्दू होना मुसलमानों द्वारा मारे जाने के लिए काफी था और इसी तरह किसी व्यक्ति का मुसलमान होना ही उसकी जान लेने के लिए पर्याप्त तर्क था। जब स्थिति ऐसी हो तो हिन्दुस्तान का ईश्वर ही मालिक है।

ऐसी स्थिति में हिन्दुस्तान का भविष्य बहुत अन्धकारमय नजर आता है। इन 'धर्मों' ने हिन्दुस्तान का बेड़ा गर्क कर दिया है। और अभी पता नहीं कि यह धार्मिक दंगे भारतवर्ष का पीछा कब छोड़ेंगे। इन दंगों ने संसार की नजरों में भारत को बदनाम कर दिया है। और हमने देखा है कि इस अन्धविश्वास के बहाव में सभी बह जाते हैं। कोई बिरला ही हिन्दू, मुसलमान या सिख होता है, जो अपना दिमाग ठण्डा रखता है, बाकी सब के सब धर्म के यह नामलेवा अपने नामलेवा धर्म के रौब को कायम रखने के लिए डण्डे लाठियाँ, तलवारें-छुरें हाथ में पकड़ लेते हैं और आपस में सर-फोड़-फोड़कर मर जाते हैं। बाकी कुछ तो फाँसी चढ़ जाते हैं और कुछ जेलों में फेंक दिये जाते हैं। इतना रक्तपात होने पर इन 'धर्मजनों' पर अंग्रेजी सरकार का डण्डा बरसता है और फिर इनके दिमाग का कीड़ा ठिकाने आ जाता है।

यहाँ तक देखा गया है, इन दंगों के पीछे साम्प्रदायिक नेताओं और अखबारों का हाथ है। इस समय हिन्दुस्तान के नेताओं ने ऐसी लीद की है कि चुप ही भली। वही नेता जिन्होंने भारत को स्वतन्त्रा कराने का बीड़ा अपने सिरों पर उठाया हुआ था और जो 'समान राष्ट्रीयता' और 'स्वराज्य-स्वराज्य' के दमगजे मारते नहीं थकते थे, वही या तो अपने सिर छिपाये चुपचाप बैठे हैं या इसी धर्मान्धता के बहाव में बह चले हैं। सिर छिपाकर बैठने वालों की संख्या भी क्या कम है? लेकिन ऐसे नेता जो साम्प्रदायिक आन्दोलन में जा मिले हैं, जमीन खोदने से सैकड़ों निकल आते हैं। जो नेता हृदय से सबका भला चाहते हैं, ऐसे बहुत ही कम हैं। और साम्प्रदायिकता की ऐसी प्रबल बाढ़ आयी हुई है कि वे भी इसे रोक नहीं पा रहे। ऐसा लग रहा है कि भारत में नेतृत्व का दिवाला पिट गया है।

दूसरे सज्जन जो साम्प्रदायिक दंगों को भड़काने में विशेष हिस्सा लेते रहे हैं, अखबार वाले हैं। पत्रकारिता का व्यवसाय, किसी समय बहुत ऊँचा समझा जाता था। आज बहुत ही गन्दा हो गया है। यह लोग एक-दूसरे के विरुद्ध बड़े मोटे-मोटे शीर्षक देकर लोगों की भावनाएँ भड़काते हैं और परस्पर सिर फुटौव्वल करवाते हैं। एक-दो जगह ही नहीं, कितनी ही जगहों पर इसलिए दंगे हुए हैं कि स्थानीय अखबारों ने बड़े उत्तेजनापूर्ण लेख लिखे हैं। ऐसे लेखक बहुत कम है जिनका दिल व दिमाग ऐसे दिनों में भी शान्त रहा हो।

अखबारों का असली कर्त्तव्य शिक्षा देना, लोगों से संकीर्णता निकालना, साम्प्रदायिक भावनाएँ हटाना, परस्पर मेल-मिलाप बढ़ाना और भारत की साझी राष्ट्रीयता बनाना था लेकिन इन्होंने अपना मुख्य कर्त्तव्य अज्ञान फैलाना, संकीर्णता का प्रचार करना, साम्प्रदायिक बनाना, लड़ाई-झगड़े करवाना और भारत की साझी राष्ट्रीयता को नष्ट करना बना लिया है। यही कारण है कि भारतवर्ष की वर्तमान दशा पर विचार कर आँखों से रक्त के आँसू बहने लगते हैं और दिल में सवाल उठता है कि 'भारत का बनेगा क्या?'

जो लोग असहयोग के दिनों के जोश व उभार को जानते हैं, उन्हें यह स्थिति देख रोना आता है। कहाँ थे वे दिन कि स्वतंत्रता की झलक सामने दिखाई देती थी और कहाँ आज यह दिन कि स्वराज्य

एक सपना मात्र बन गया है। बस यही तीसरा लाभ है, जो इन दंगों से अत्याचारियों को मिला है। जिसके अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया था, कि आज गयी, कल गयी वही नौकरशाही आज अपनी जड़ें इतनी मजबूत कर चुकी हैं कि उसे हिलाना कोई मामूली काम नहीं है।

यदि इन साम्प्रदायिक दंगों की जड़ खोजें तो हमें इसका कारण आर्थिक ही जान पड़ता है। असहयोग के दिनों में नेताओं व पत्रकारों ने ढेरों कुर्बानियाँ दीं। उनकी आर्थिक दशा बिगड़ गयी थी। असहयोग आन्दोलन के धीमा पड़ने पर नेताओं पर अविश्वास-सा हो गया जिससे आजकल के बहुत से साम्प्रदायिक नेताओं के धन्धे चौपट हो गये। विश्व में जो भी काम होता है, उसकी तह में पेट का सवाल जरूर होता है। कार्ल मार्क्स के तीन बड़े सिद्धान्तों में से यह एक मुख्य सिद्धान्त है। इसी सिद्धांत के कारण ही तबलीग, तनकीम, शुद्धि आदि संगठन शुरू हुए और इसी कारण से आज हमारी ऐसी दुर्दशा हुई, जो अवर्णनीय है।

बस, सभी दंगों का इलाज यदि कोई हो सकता है तो वह भारत की आर्थिक दशा में सुधार से ही हो सकता है दरअसल भारत के आम लोगों की आर्थिक दशा इतनी खराब है कि एक व्यक्ति दूसरे को चवन्नी देकर किसी और को अपमानित करवा सकता है। भूख और दुख से आतुर होकर मनुष्य सभी सिद्धान्त ताक पर रख देता है। सच है, मरता क्या न करता। लेकिन वर्तमान स्थिति में आर्थिक सुधार होना अत्यन्त कठिन है क्योंकि सरकार विदेशी है और लोगों की स्थिति को सुधरने नहीं देती। इसीलिए लोगों को हाथ धोकर इसके पीछे पड़ जाना चाहिये और जब तक सरकार बदल न जाये, चैन की सांस न लेना चाहिए।

लोगों को परस्पर लड़ने से रोकने के लिए वर्ग-चेतना की जरूरत है। गरीब, मेहनतकशों व किसानों को स्पष्ट समझा देना चाहिए कि तुम्हारे असली दुश्मन पूँजीपति हैं। इसलिए तुम्हें इनके हथकंडों से बचकर रहना चाहिए और इनके हत्थे चढ़ कुछ न करना चाहिए। संसार के सभी गरीबों के, चाहे वे किसी भी जाति, रंग, धर्म या राष्ट्र के हों, अधिकार एक ही हैं। तुम्हारी भलाई इसी में है कि तुम धर्म, रंग, नस्ल और राष्ट्रीयता व देश के भेदभाव मिटाकर एकजुट हो जाओ और सरकार की ताकत अपने हाथों में लेने का प्रयत्न करो। इन यत्नों से तुम्हारा नुकसान कुछ नहीं होगा, इससे किसी दिन तुम्हारी जंजीरें कट जायेंगी और तुम्हें आर्थिक स्वतंत्रता मिलेगी।

जो लोग रूस का इतिहास जानते हैं, उन्हें मालूम है कि जार के समय वहाँ भी ऐसी ही स्थितियाँ थीं वहाँ भी कितने ही समुदाय थे जो परस्पर जूत-पतांग करते रहते थे। लेकिन जिस दिन से वहाँ श्रमिक-शासन हुआ है, वहाँ नक्शा ही बदल गया है। अब वहाँ कभी दंगे नहीं हुए। अब वहाँ सभी को 'इन्सान' समझा जाता है, 'धर्मजन' नहीं। जार के समय लोगों की आर्थिक दशा बहुत ही खराब थी। इसलिए सब दंगे-फसाद होते थे। लेकिन अब रूसियों की आर्थिक दशा सुधर गयी है और उनमें वर्ग-चेतना आ गयी है इसलिए अब वहाँ से कभी किसी दंगे की खबर नहीं आयी।

इन दंगों में वैसे तो बड़े निराशाजनक समाचार सुनने में आते हैं, लेकिन कलकत्ते के दंगों में एक बात बहुत खुशी की सुनने में आयी। वह यह कि वहाँ दंगों में ट्रेड यूनियन के मजदूरों ने हिस्सा नहीं लिया और न ही वे परस्पर गुत्थमगुत्था ही हुए, वरन् सभी हिन्दू-मुसलमान बड़े प्रेम से कारखानों आदि में उठते-बैठते और दंगे रोकने के भी यत्न करते रहे। यह इसलिए कि उनमें वर्ग-चेतना थी और वे अपने वर्गहित को अच्छी तरह पहचानते थे। वर्ग चेतना का यही सुन्दर रास्ता है, जो साम्प्रदायिक दंगे रोक सकता है।

यह खुशी का समाचार हमारे कानों को मिला है कि भारत के नवयुवक अब वैसे धर्मों से जो परस्पर लड़ाना व घृणा करना सिखाते हैं, तंग आकर हाथ धो रहे हैं। उनमें इतना खुलापन आ गया है कि वे भारत के लोगों को धर्म की नजर से-हिन्दू, मुसलमान या सिख रूप में नहीं, वरन् सभी को पहले इन्सान समझते हैं, फिर भारतवासी। भारत के युवकों में इन विचारों के पैदा होने से पता चलता है कि भारत का भविष्य सुनहला है। भारतवासियों को इन दंगों आदि को देखकर घबराना नहीं चाहिए। उन्हें यत्न करना चाहिए कि ऐसा वातावरण ही न बने, और दंगे हों ही नहीं।

1914-15 के शहीदों ने धर्म को राजनीति से अलग कर दिया था। वे समझते थे कि धर्म व्यक्ति का व्यक्तिगत मामला है इसमें दूसरे का कोई दखल नहीं। न ही इसे राजनीति में घुसाना चाहिए क्योंकि यह सरबत को मिलकर एक जगह काम नहीं करने देता। इसलिए गदर पार्टी जैसे आन्दोलन एकजुट व एकजान रहे, जिसमें सिख बढ़-चढ़कर फाँसियों पर चढ़े और हिन्दू मुसलमान भी पीछे नहीं रहे।

इस समय कुछ भारतीय नेता भी मैदान में उतरे हैं जो धर्म को राजनीति से अलग करना चाहते हैं। झगड़ा मिटाने का यह भी एक सुन्दर इलाज है और हम इसका समर्थन करते हैं।

यदि धर्म को अलग कर दिया जाये तो राजनीति पर हम सभी इकट्ठे हो सकते है। धर्मों में हम चाहे अलग-अलग ही रहें।

हमारा ख्याल है कि भारत के सच्चे हमदर्द हमारे बताये इलाज पर जरूर विचार करेंगे और भारत का इस समय जो आत्मघात हो रहा है, उससे हमें बचा लेंगे।

पढ़ते-पढ़ाते

धम्म, धर्म के अनुरूप नहीं है। धम्म का शाब्दिक अर्थ है सदाचरण अर्थात एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के साथ सभी क्षेत्रों में अच्छा व्यवहार। इसका अर्थ यह भी होता है कि यदि व्यक्ति नेक है तो उसको धम्म की आवश्यकता नहीं है। धम्म धारण करने वाले व्यक्ति के अंदर प्रज्ञा और करुणा का होना बहुत आवश्यक है। प्रज्ञा का अर्थ है सम्यक जानकारी अर्थात सही और गलत के अंतर को जाननाऔर उसको निष्पक्ष और निडर तरीके से आचरण में लाना। करुणा यूं तो दया से बिल्कुल अलग है क्योंकि दया में एक व्यक्ति श्रेष्ठ और दूसरा लाचार/ मजबूर होता है लेकिन करुणा में स्वयं को उस दुखी व्यक्ति की अवस्था में महसूस करना होता है। इसमें श्रेष्ठता और लाचारी का भान नहीं होता अर्थात लोकतांत्रिक ढांचे को सफल बनाने के लिए प्रज्ञा और करुणा को आधार बनाना होगा।

प्रथम गणतंत्र दिवस : चित्रों में

भारतीय संविधान के नीति निर्देशक सिद्धांत

संविधान कुछ राज्य के नीति निर्देशक तत्व निर्धारित करता है, यद्यपि ये न्यायालय में कानूनन न्यायोचित नहीं ठहराए जा सकते, परन्तु देश के शासन के लिए मौलिक हैं, और कानून बनाने में इन सिद्धान्तों को लागू करना राज्य का कर्तव्य है। ये निर्धारित करते हैं कि राज्य यथासंभव सामाजिक व्यवस्था जिसमें-सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय की व्यवस्था राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं में कायम करके जनता नीतियों को ऐसी दिशा देगा ताकि सभी पुरुषों और महिलाओं को जीविकोपार्जन के पर्याप्त साधन मुहैया कराए जाएं। समान कार्य के लिए समान वेतन और यह इसकी आर्थिक क्षमता एवं विकास के भीतर हो, कार्य के अधिकार प्राप्त करने के लिए प्रभावी व्यवस्था करने, बेरोजगार के मामले में शिक्षा एवं सार्वजनिक सहायता, वृद्धावस्था, बीमारी एवं असमर्थता या अयोग्यता की आवश्यकता के अन्य मामले में सहायता करना। राज्य कर्मकारों के लिए निर्वाह मजदूरी, कार्य की मानवीय स्थितियों, जीवन का शालीन स्तर और उद्योगों के प्रबंधन में कामगारों की पूर्ण सहभागिता प्राप्त करने के प्रयास करेगा।

आर्थिक क्षेत्र में राज्य को अपनी नीति इस तरह से बनानी चाहिए ताकि सार्वजनिक हित के निमित सहायक होने वाले भौतिक संसाधनों का वितरण का स्वामित्व एवं नियंत्रण हो, और यह सुनिश्चित करने के लिए कि आर्थिक प्रणाली कार्य के फलस्वरूप धन का और उत्पादन के साधनों का जमाव सार्वजनिक हानि के लिए नहीं हो।

कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण निर्देशक तत्व बच्चों के लिए अवसरों और सुविधाओं की व्यवस्था से संबंधित हैं ताकि उनका विकास अच्छी तरह हो, 14 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों के लिए मुक्त एवं अनिवार्य शिक्षा, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य कमजोर वर्गों के लिए शिक्षा और आर्थिक हितों का संवर्धन ग्राम पंचायतों का संगठन; कार्यपालिका से न्यायपालिका को अलग करना; पूरे देश के लिए एक समान सिविल कोड लागू करना, राष्ट्रीय स्मारकों की रक्षा करना, समान अवसर के आधार पर न्याय का संवर्धन करना, मुक्त कानूनी सहायता की व्यवस्था, पर्यावरण की रक्षा और उन्नयन और देश के वनों एवं वन्य जीवों की रक्षा करना; अंतरराष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा का विकास, राष्ट्रों के बीच न्याय और सम्मानजनक संबंध, अंतरराष्ट्रीय कानूनों संधि बाध्यताओं का सम्मान करना, मध्यवर्ती द्वारा अंतरराष्ट्रीय विवादों का निपटान करना।

गणतंत्र और लोकतंत्र

डॉ. अरुण कुमार त्रिपाठी

वरिष्ठ विचारक, डी-104 जनसत्ता सोसायटी, सेक्टर 9 वसुंधरा गाजियाबाद-201012 उत्तर प्रदेश

गणतंत्र और लोकतंत्र जैसे शब्दों में अंतर है। इस बात को डॉ. भीमराव आंबेडकर ने स्पष्ट करने की कोशिश की थी। दरअसल गणतंत्र एक प्रणाली है जबकि लोकतंत्र एक पूरी संस्कृति और जीवन मूल्य है। लोग मानते हैं कि चुनाव हुआ और सरकार चुन ली गई तो समझो लोकतंत्र चल रहा है। यह लोकतंत्र नहीं गणतंत्र है। लोकतंत्र इससे आगे की चीज है।

जो लोग लिच्छिवियों और शाक्यों के गणतंत्र का हवाला देते हैं वे यह नहीं बताते कि गणतंत्र और लोकतंत्र में अंतर है। वही अंतर जो प्राचीन यूनान के गणतंत्र और आज के यूरोपीय और अमेरिकी लोकतंत्र में है। सिर्फ शासन करने वालों को चुनने का अधिकार मिल जाने से लोकतंत्र कायम नहीं होता। डॉ. आंबेडकर कहते हैं, "लोकतंत्र का अर्थ एक राजनीतिक मशीन से लिया जाता है। माना जाता है जहाँ वह मशीन है वहाँ लोकतंत्र कायम है। यह भी समझा जाता है कि जहाँ गणतंत्र होगा वहाँ लोकतंत्र होगा ही। यानी जहाँ संसद है और वयस्क लोग नियमित होने वाले चुनाव में वोट देकर उसे चुनते हैं, संसद कानून बनाती है वहाँ लोकतंत्र है। क्या भारत में लोकतंत्र है या लोकतंत्र बिल्कुल नहीं है?" (डॉ. आंबेडकर, 20 मई 1956)

वे अपनी बात को और स्पष्ट करते हुए कहते हैं, "एक तो लोकतंत्र का मतलब गणतंत्र से नहीं है। दूसरी बात यह है कि हर जगह जहाँ संसदीय सरकार है वहाँ लोकतंत्र है ऐसा आवश्यक नहीं है। इसी कारण भ्रम पैदा होता है। लोकतंत्र इन दोनों से एकदम अलग चीज है। लोकतंत्र की जड़ें सरकार के स्वरूप में नहीं होतीं बल्कि उससे अलग होती हैं। लोकतंत्र प्राथमिक रूप से मिली जुली जीवन पद्धति है। लोकतंत्र की जड़ें सामाजिक संबंधों में होती हैं। जो लोग समाज बनाते हैं उनके साझा जीवन में होती हैं। समाज क्या है? समाज वास्तव में एक समुदाय है जिसका कोई मकसद है, कल्याण करने की इच्छा है, सार्वजनिक उद्देश्य के लिए निष्ठा है, पारस्परिक सहानुभूति और सहयोग की भावना है। क्या यह चीजें भारतीय समाज में हैं? नहीं। भारतीय समाज में व्यक्ति नहीं है। यहाँ ढेर सारी जातियों का संकलन है जो एक दूसरे से साझीदारी नहीं करती हैं। उनमें सहानुभूति का कोई सूत्र नहीं है। जाति व्यवस्था के कारण यहाँ समाज के आदर्श नहीं हैं। इसलिए लोकतंत्र नहीं हैं। हर चीज जाति व्यवस्था के आधार पर संगठित है। जाति के कारण भारतीय लोग एक दूसरे से शादी नहीं कर सकते न ही एक साथ भोजन कर सकते हैं।"

वास्तव में डॉ. आंबेडकर स्वयं मानते हैं कि दुनिया में लोकतंत्र क्या है इस बारे में एक राय नहीं है। एक राय यह कहती है कि जहाँ जनता सरकार चुनती है वहाँ लोकतंत्र है। जबकि दूसरी राय यह है कि लोकतंत्र सरकार की प्रणाली से कहीं बड़ी चीज है। वे कहते हैं कि लोकतंत्र वास्तव में समाज का एक संगठन है। उनके अनुसार लोकतांत्रिक रूप से गठित समाज की दो अनिवार्य शर्तें है:—

1. समाज में वर्गीय आधार पर जड़ता का अभाव।

2. व्यक्ति और समूह सदैव तालमेल करने को तैयार रहते हैं और हितों की पारस्परिकता को मान्यता देते हैं।

यहाँ पर डॉ. आंबेडकर स्पष्ट रूप से कहते हैं कि अगर दूसरी शर्त का पालन नहीं होता तो समाज अलोकतांत्रिक हो जाता है। जो लोग मानते हैं कि लोकतंत्र का मतलब सिर्फ चुनाव से होता है वे तीन गलतियाँ करते हैं।

पहली गलती यह है कि सरकार नामक संस्था समाज से कटी रहती है और भिन्न होती है। वास्तव में वैसा नहीं है। सरकार उन तमाम संस्थाओं में से है जिसे समाज तैयार करता है। ताकि वह समाज द्वारा सौंपे गए कुछ दायित्वों का निर्वाह कर सके।

दूसरी गलती यह है कि वे यह भूल जाते हैं कि सरकार को समाज के अन्नतिम उद्देश्य और इच्छाओं का पालन करना होता है। ऐसा तभी हो सकता है जब सरकार जिस समाज में खड़ी हो वह लोकतांत्रिक हो। अगर समाज लोकतांत्रिक नहीं है तो सरकार लोकतांत्रिक नहीं हो सकती। अगर समाज वर्गों में बँटा है तो सरकार शासक वर्ग के हितों की रक्षा करने में लगी रहती है।

तीसरी गलती यह है कि लोग यह नहीं समझते कि सरकार कैसी भी हो वह अफसरों यानी सिविल सर्वेंटस पर निर्भर करती है। वे लोग कैसे होंगे यह उस सामाजिक परिवेश पर निर्भर करता है जिसमें वे लोग तैयार होते हैं।

यहाँ फिर वही बात दोहराई जानी चाहिए कि एक लोकतांत्रिक सरकार के लिए लोकतांत्रिक समाज का होना अनिवार्य है।

डॉ. आंबेडकर यहाँ एक और प्रश्न उपस्थित करते हैं कि संविधान में उल्लखित स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व के तीन मूल्यों में से कौन सा मूल्य सबसे प्रमुख है? कुछ लोग लोकतंत्र को समता और स्वतंत्रता तक सीमित कर देते हैं। निश्चित तौर पर वे लोकतंत्र के महत्त्वपूर्ण सरोकार हैं। लेकिन यह सही नहीं है। समता और स्वतंत्रता को जो चीज टिकाती है वह है सहमनापन यानी मित्रता। बुद्ध ने इसके लिए मैत्री शब्द का प्रयोग किया है। डॉ. आंबेडकर मैत्री का महत्त्व समझाते हुए कहते हैं कि मैत्री के बिना समता स्वतंत्रता को नष्ट कर देगी या स्वतंत्रता समता को नष्ट कर देगी। लोकतंत्र में अगर समता स्वतंत्रता को नष्ट नहीं करती और स्वतंत्रता समता को नष्ट नहीं करती तो उसकी वजह मैत्री है। इसलिए बंधुत्व ही लोकतंत्र का मूल आधार है।

उनकी इस व्याख्या से जाहिर है कि जहाँ स्वतंत्रता और समता सरकार और नागरिकों के आपसी संबंधों की कसौटी है वहीं बंधुत्व स्पष्ट तौर पर समाज के अंतर्संबंधों की। इसलिए बंधुत्व लोकतंत्र का आधार है। जबकि समता और स्वतंत्रता गणतंत्र का। इसी बिंदु पर डॉ. आंबेडकर और गांधी बहुत करीब आ जाते हैं। गांधी अगर सारे जीवन

स्वतंत्रता और बंधुत्व के लिए लड़ते रहे तो डॉ. आंबेडकर समता के लिए लड़ते हुए बंधुत्व पर जोर देकर गए।

लोकतंत्र को कामयाब करने की क्या शर्तें हैं इस बारे में भी उनकी राय स्पष्ट है। वे तीन शर्तें बताते हैं जिनके आधार पर लोकतंत्र को कामयाब किया जा सकता है। पहला आधार है कि समाज में असमानता नहीं होनी चाहिए। इससे हिंसक क्रांति हो सकती है। अब्राहम लिंकन ने भी कहा है कि जो घर अपने ही विरुद्ध विभाजित होता है वह चल नहीं सकता। दूसरी शर्त है विपक्ष का अस्तित्व। विपक्ष सरकार के अलोकतांत्रिक कामों पर वीटो लगाने का काम करता है। इसके अलावा पाँच साल बाद सभी को जनता के पास जाना होता है और उस समय जनता सत्तापक्ष को खारिज कर विपक्ष को सत्ता में बिठा सकती है।

लोकतंत्र की तीसरी शर्त है विधि और प्रशासन के समक्ष समानता। मतलब कानून सभी के प्रति समान दृष्टि रखकर बनेंगे और प्रशासन भी उन कानूनों को न्यायिक ढंग से लागू करेगा। इसके साथ एक पेंच यह भी है जो समाज में जो विभिन्न श्रेणियाँ हैं उन्हें अलग अलग रखना गैर मुनासिब नहीं है। जैसे कि डॉक्टर, वकील, इंजीनियर या मजदूर किसान यह सब अलग अलग श्रेणियाँ हैं। इनके लिए अलग अलग कानून बनाया जाना गैर मुनासिब नहीं है।

चौथी शर्त है संवैधानिक नैतिकता का का पालन। कई चीजें ऐसी होती हैं जिन्हें रोकने के लिए कानून नहीं होता। पर नैतिक आधार पर उन्हें न करना ही श्रेयस्कर होता है। जैसे कि नैतिकता के आधार पर किसी घटना की जिम्मेदारी लेते हुए पद से इस्तीफा देना या एक खास उम्र के बाद चुनाव न लड़ना आदि।

पाँचवीं शर्त यह है कि लोकतंत्र में बहुसंख्यकों का अल्पसंख्यकों पर आतंक नहीं होना चाहिए। सरकार बहुमत से जरूर चलनी चाहिए लेकिन अल्पमत में रहने वालों को आहत नहीं करना चाहिए। न ही अल्पसंख्यक या अल्पमत के लोगों पर नाजायज हमले करने चाहिए।

डॉ. आंबेडकर के बारे में यह आम धारणा है कि वे पाश्चात्य दर्शन और चिंतन से प्रभावित थे। इसीलिए जिस संवैधानिक लोकतंत्र को कायम करने में उन्होंने अपनी पूरी प्रतिभा झोंक दी वह तो विदेशी मॉडल है। संविधान में भारतीयता न होने की शिकायत करने वाले इस बात का उल्लेख ज्यादा करते हैं। लेकिन डॉ. आंबेडकर की प्रेरणा में पश्चिम से कहीं कम भारतीय चिंतन और दर्शन की प्रेरणा नहीं है।

जब 26 जनवरी 1950 को भारतीय संविधान अंगीकार किया जा रहा था तो उनका कथन गौर करने लायक है। उन्होंने कहा था, "संसदीय क्षेत्र निर्मित होने के साथ भारत अपनी बौद्ध जड़ों से जुड़ गया है। ऐसा नहीं था कि भारत को संसद और संसदीय प्रणाली का ज्ञान नहीं था। बौद्ध भिक्खु संघ का अध्ययन करने पर पता चलता है कि उस समय न सिर्फ संसद थी बल्कि बौद्ध भिक्खु संघ अपने आप में संसद ही था। इसके अलावा संघ को संसदीय प्रक्रिया के वे सारे नियम मालूम थे और वह उनका पालन करता था जिनका आज लोग पालन करते हैं।"

लोकतंत्र में व्यक्ति की गरिमा कितनी आवश्यक है इसका अंदाज संविधान सभा की उस बहस से लगता है जब हमारे संविधान की उद्देशिका पर चर्चा चल रही थी। जब सवाल उठा कि राष्ट्र की एकता और अखंडता को पहले रखा जाए या व्यक्ति की गरिमा को तब न सिर्फ डॉ. भीमराव आंबेडकर ने बल्कि के. एम. मुंशी ने भी कहा कि व्यक्ति की गरिमा को पहले रखा जाए।

महात्मा गांधी जिसे अहिंसा कहते हैं वह दरअसल प्रेम और मैत्री ही है। वे कहते भी हैं कि मैं अहिंसा शब्द का प्रयोग इसलिए करता हूँ क्योंकि प्रेम का प्रयोग करने से उसका ऐंद्रिक अर्थ भी लिया जा सकता है। लेकिन प्रेम और अहिंसा एक ही तत्व है। यही लोकतंत्र का आधार है।

सनातन संगीत

मेरा-तुम्हारा-हमारा
व्यष्टि से समष्टि का राग

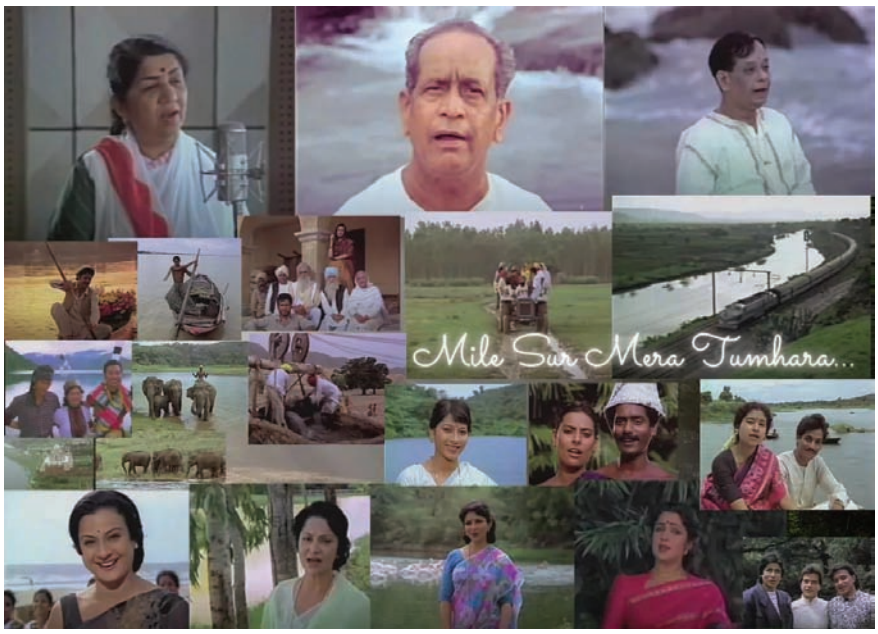

स्वतंत्रता दिवस 1988 को लाल किले से प्रधानमंत्री के राष्ट्र के नाम संबोधन के बाद पहली बार दूरदर्शन से प्रसारण किया गया।

मिले सुर मेरा तुम्हारा
तो सुर बने हमारा
सुर की नदिया हर दिशा से
बह के सागर में मिले
बादलों का रूप ले के
बरसे हल्के हल्के

गीत– पीयूष पांडे
संगीत– पंडित भीमसेन जोशी

भारतीय राष्ट्रीय एकात्मता के इस गीत को हिंदी के अतिरिक्त असमिया, गुजराती, कन्नड़, बंगाली, कश्मीरी, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, सिंधी, तमिल, तेलुगु, उर्दू में विभिन्न प्रसिद्ध गायकों ने गाया है।

भारतीय संविधान की प्रमुख विशेषताएँ

वर्तमान संविधान बनाने से पहले, निर्माताओं ने विभिन्न देशों के संविधानों और 1935 के भारत सरकार अधिनियम की कार्यप्रणाली का अध्ययन किया। उन्होंने दुनिया के कई देशों के संविधानों से उदारतापूर्वक उपयुक्त प्रावधान उधार लिए। भारतीय संविधान की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं।

1. दुनिया का सबसे लंबा संविधान– संविधानों को लिखित संविधान के रूप में वर्गीकृत किया जाता है, जैसे कि अमेरिकी संविधान, या अलिखित संविधान के रूप में, जैसे कि ब्रिटिश संविधान। भारत का संविधान दुनिया के सभी लिखित संविधानों में सबसे लंबा है। यह एक बहुत ही व्यापक, विस्तृत और विस्तृत दस्तावेज़ है।

भारतीय संविधान में मूल रूप से 395 अनुच्छेद थे, जो 22 भागों और 9 अनुसूचियों में विभाजित थे। वर्तमान में, इसमें एक प्रस्तावना, लगभग 450 अनुच्छेद हैं, जो 24 भागों और 12 अनुसूचियों में विभाजित हैं।

2. संसदीय शासन प्रणाली–भारत के संविधान में अमेरिकी राष्ट्रपति प्रणाली की बजाय ब्रिटिश संसदीय प्रणाली को अपनाया गया है। संसदीय प्रणाली विधायी और कार्यकारी अंगों के बीच सहयोग और समन्वय के सिद्धांत पर आधारित है, जबकि राष्ट्रपति प्रणाली दोनों अंगों के बीच शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत पर आधारित है।

3. कठोरता और लचीलेपन का अनूठा मिश्रण– भारत का संविधान न तो कठोर है और न ही लचीला, बल्कि यह दोनों का संश्लेषण है। कठोर संविधान वह होता है जिसमें संशोधन के लिए विशेष प्रक्रिया की आवश्यकता होती है, जबकि लचीला संविधान वह होता है जिसमें सामान्य कानूनों की तरह ही संशोधन किया जा सकता है।

4. मौलिक अधिकार– भारतीय संविधान का भाग III सभी नागरिकों को छह मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है– (क) समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14-18); (ख) स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19-22); (ग) शोषण के विरुद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23-24); (घ) धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 25-28); (ई) सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार (अनुच्छेद 29-30); (च) संवैधानिक उपचार का अधिकार (अनुच्छेद 32)।

मौलिक अधिकार राजनीतिक लोकतंत्र के विचार को बढ़ावा देते हैं। वे कार्यपालिका के अत्याचार और विधायिका के मनमाने कानूनों पर अंकुश लगाने का काम करते हैं।

5. राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत– संविधान के भाग में निहित राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत देश के शासन में राज्य द्वारा अपनाए जाने वाले लक्ष्यों और उद्देश्यों को निर्धारित करते हैं। बीआर अंबेडकर के अनुसार "राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत भारतीय संविधान की एक नई विशेषता है। उन्हें तीन व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है, समाजवादी, गांधीवादी और उदार-बौद्धिक।

6. मौलिक कर्तव्य– बयालीसवें संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान में भाग IVA जोड़ा गया है, जिसमें नागरिकों के कुछ मौलिक कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है। मूल रूप से, अनुच्छेद 51A के खंड (a) से (j) में दस कर्तव्य सूचीबद्ध किए गए थे। खंड (k), जो माता-पिता/वार्ड पर कर्तव्य लगाता है, संविधान (86वां संशोधन) अधिनियम, 2002 द्वारा जोड़ा गया है।

7. एक मजबूत केंद्रीकरण प्रवृत्ति वाला संघ– संविधान में 'संघ' शब्द का इस्तेमाल नहीं किया गया है। अनुच्छेद 1 में बताया गया है कि भारत "राज्यों का संघ है", जिसका तात्पर्य दो बातों से है: पहला– भारतीय संघ राज्यों के बीच हुए समझौते का नतीजा नहीं है, और दूसरा– किसी भी राज्य को संघ से अलग होने का अधिकार नहीं है। भारत का संविधान सरकार की संघीय प्रणाली स्थापित करता है। इसमें संघ की सभी सामान्य विशेषताएँ शामिल हैं, जैसे दो सरकारें, शक्तियों का विभाजन, लिखित संविधान, संविधान की सर्वोच्चता, संविधान की कठोरता, स्वतंत्र न्यायपालिका और द्विसदनीयता।

8. वयस्क मताधिकार– भारत में, 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने वाला प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह पुरुष हो या महिला, संसद या राज्य विधानमंडलों के चुनावों में मतदान करने का हकदार है। मूल रूप से यह आयु सीमा 21 वर्ष थी, लेकिन 61वें संशोधन अधिनियम, 1988 के बाद इसे घटाकर 18 वर्ष कर दिया गया।

9. स्वतंत्र न्यायपालिका– व्यक्तियों के बीच, संघ और राज्य के बीच, संघ/राज्य और व्यक्तियों के बीच, संघ और राज्यों के बीच या राज्यों के बीच आपसी विवादों के निष्पक्ष निर्णय के लिए न्यायपालिका की स्वतंत्रता आवश्यक है। सर्वोच्च न्यायालय देश की एकीकृत न्यायिक प्रणाली में सबसे ऊपर है। इसके नीचे, राज्य स्तर पर उच्च न्यायालय हैं। न्यायालयों की यह एकल प्रणाली केंद्रीय कानूनों के साथ-साथ राज्य कानूनों को भी लागू करती है।

भारत का सर्वोच्च न्यायालय एक संघीय न्यायालय, अपील का सर्वोच्च न्यायालय, नागरिकों के मौलिक अधिकारों का गारंटर और संविधान का संरक्षक है।

10. एक धर्मनिरपेक्ष राज्य– भारत का संविधान एक धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना करता है। इसलिए, यह किसी विशेष धर्म को भारतीय राज्य के आधिकारिक धर्म के रूप में मान्यता नहीं देता है। 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा भारतीय संविधान की प्रस्तावना में 'धर्मनिरपेक्ष' शब्द जोड़ा गया था। संविधान के अनुच्छेद 25-28 धर्मनिरपेक्षता की इस अवधारणा को ठोस रूप देते हैं।

11. एकल नागरिकता– ज़्यादातर संघों में लोगों के पास दोहरी नागरिकता होती है, संघ की नागरिकता और संघ बनाने वाले कई राज्यों में से एक की नागरिकता। हर नागरिक भारत का नागरिक है और उसे नागरिकता के समान अधिकार प्राप्त हैं, चाहे वह किसी भी राज्य में रहता हो।

12. शक्तियों का पृथक्करण– इस सिद्धांत को पहली बार प्रसिद्ध न्यायविद मोंटेस्क्यू ने अपनी पुस्तक एस्क्रिप्ट देस लोइस में उचित रूप से तैयार किया था और इसका फ्रांसीसी कानूनी प्रणाली पर बहुत प्रभाव पड़ा। शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का तात्पर्य है कि सरकार के तीन अंगों, अर्थात् विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की शक्तियों को एक दूसरे से अलग रखा जाना चाहिए।

नए संसद भवन के सभी 6 द्वार

1. गज द्वार– ये गेट उत्तर दिशा में हैं। गज का मतलब हाथी होता है। गेट पर हाथी की दो मूर्तियां बनी हैं। हाथी बुद्धि, धन और स्मृति का प्रतिनिधित्व करता है। इसके साथ ही ये गेट निर्वाचित लोगों की आकांक्षाओं का भी प्रतीक है। गज भगवान गणेश के प्रतिनिधि हैं। इसके अलावा, उत्तर दिशा का संबंध बुध ग्रह से है, जो उच्च बुद्धि का स्रोत है।

2. अश्व द्वार– अश्व का मतलब घोड़े से है। ये गेट दक्षिण दिशा में बना है। भारतीय संस्कृति और इतिहास में घोड़ा को शक्ति, ताकत और साहस का प्रतीक माना जाता है। शास्त्र स्त्रों में इसे समृद्धि का प्रतीक माना गया है। ये गति का भी प्रतीक है। इसका मतलब है कि संसद कभी रुकेगी नहीं और जनहित में हमेशा जारी रहेगी। अश्व की प्रतिमा ओडिशा के सूर्य मंदिर से प्रेरित है।

3. गरुड़ द्वार– गरुड़ द्वार नए संसद भवन के पूर्वी दिशा में है। गरुड़ को पक्षियों का राजा भी कहा जाता है। साथ ही, ये भगवान विष्णु का वाहन हैं। ये गेट देश के लोगों और प्रशासकों की आकांक्षाओं का प्रतीक है। शास्त्रों में गरुड़ आशा, जीत की महिमा और सफलता का प्रतिनिधित्व करते हैं। गरुड़ इस बात का प्रतीक है कि संसद लोगों की शक्ति है और जो लोग अंदर हैं वे अपने धर्म का पालन करेंगे। ये प्रतिमा तमिलनाडु में 18 वीं सदी के नायका काल से प्रभावित है।

4. मकर द्वार– इस चौथे गेट का नाम एक पौराणिक जलीय जीव पर रखा गया है। ये आधा स्तनपायी और आधी मछली होता है। ये जीव रक्षकों से जुड़ा हुआ है और अक्सर हिंदू, बौद्ध स्मारकों में देखा जाता है। शास्त्रों में मकर को कामदेव की ध्वजा का चिन्ह बताया गया है। मकर द्वार को कर्नाटक के होयसलेसवरा मंदिर से प्रेरित बताया गया है।

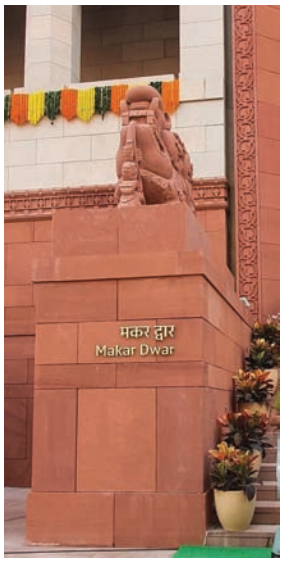

5. शार्दूल द्वार– ये पांचवा गेट भी एक पौराणिक जीव से प्रेरित है। जिसका शरीर शेर का लेकिन सिर घोड़ा, हाथी या तोते का होता है। शार्दूल को सभी जीवित प्राणियों में अग्रणी कहा जाता है, जो देश के लोगों की शक्ति का प्रतीक है। शार्दूल की मूर्ति ग्वालियर के गुजरी मंदिर से प्रेरित बताई जाती है।

6. हंस द्वार– हंस ज्ञान की हिंदू देवी सरस्वती की सवारी है। हंस की उड़ान मोक्ष का प्रतीक है, या इसका अर्थ है जन्म और मृत्यु के चक्र से आत्मा की मुक्ति। संसद के द्वार पर हंस की मूर्ति आत्म-साक्षात्कार और ज्ञान का प्रतीक है।

प्रसंग :

हमारा संविधान और हमारा लोकतंत्र

वेदव्यास

वरिष्ठ साहित्यकार, पत्रकार एवं विचारक

भारत का संविधान ही 140 करोड़ देशवासियों की आत्मा है और डॉ. भीमराव अंबेडकर ही इसकी प्रस्तावना के रचनाकार हैं।

हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न समाजवादी, पंथ निरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।'

डॉ. भीमराव अंबेडकर को इस संविधान के आलोक में याद करते हुए जब हम भारत की खोज को पढ़ते हैं, तो लगता है कि वंदे मातरम् और जन गण मन' जैसी आराधना से बढ़कर कोई अन्य कविता इस धरती पर हो ही नहीं सकती। भारत का यह दिव्य सपना 26 नवंबर, 1949 से हमारे देश का मार्गदर्शक है।

दुनिया के सबसे बड़े लिखित संविधान में वर्णित जो मौलिक अधिकार (1) समानता का अधिकार (2) स्वतंत्रता का अधिकार (3) शोषण के विरुद्ध अधिकार (4) धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार (5) संस्कृति तथा शिक्षा संबंधी अधिकार (6) संवैधानिक उपचारों का अधिकार आज हमें प्राप्त है, उसकी अनुपालना में ही विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका की संपूर्ण संरचना प्रेरित और उत्तरदायी है। इस विभाजीत राष्ट्र की अनेकताओं को एकता में बांधने का यह अमर तंत्र जब डॉ. अंबेडकर ने लिखा था, तब वह कोई दलित नहीं थे, अपितु एक भारतीय नागरिक थे। इसी तरह 1857 से लेकर 1947 तक भारत में जो आजादी की लड़ाई लड़ी गई, उसके सभी महानायक किसी जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र और वर्ग के सैनिक और सेनानी नहीं थे, अपितु भारत के उपासक थे। लेकिन आजकल लगता है कि हमने अपने सभी राष्ट्र निर्माताओं को जाति, धर्म, भाषा और क्षेत्रीयता के हाशिए पर धकेल दिया है। यही कारण है कि नए भारत की पिछले 75 साल की कहानी समानता, स्वतंत्रता, शोषण के विरुद्ध, धार्मिक स्वतंत्रता, संस्कृति तथा शिक्षा संबंधी अधिकार और इसके संवैधानिक उपचारों के आसपास ही घूम रही है। अंबेडकर को दलित नेता बना दिया है, तो ज्योतिबा फुले को मालियों का आराध्य, भगत सिंह को चरमपंथ का सिपाही, तो वल्लभ भाई पटेल को गुजरात का गौरव, तो सुभाषचंद्र बोस को बंगाल गरिमा, तो जवाहरलाल नेहरू को वंशवाद का जनक, तो विवेकानंद को कट्टर हिंदुत्व का प्रणेता, तो सुब्रहण्यम भारती को तमिल प्रतिष्ठा और न जाने किन-किन को अपनी-अपनी कैसी-कैसी जाति-धर्म की पहचान का प्रतीक बना दिया है।

लगता है, संपूर्ण मानवता के उपासकों की जगह राम-कृष्ण को हिंदुओं की, बुद्ध को बौद्धों की, हजरत मोहम्मद को मुसलमानों की, गुरु नानक को सिक्खों की, महावीर को जैनियों की तथा ईसा मसीह को ईसाइयों की चारदीवारी में ही कैद कर दिया गया है; नदी, पर्वत, हवा, प्रकाश, पृथ्वी तक को अपनी जाति-धर्म की पहचान में समेट लिया है तथा माँ गंगा की जीवनदायी पवित्रता को भी संस्कृति की मुख्यधारा तथा सूर्य और चंद्रमा को भी नमस्कार में बदल दिया है। जब महात्मा गांधी को किसी राजनीतिक पार्टी का विज्ञापन बना देते हैं और अंबेडकर को दलितों का मसीहा कहते रहते हैं, तो हम यह भूल जाते हैं कि इनका जीवन-दर्शन क्या था? हम एक कृतज्ञ राष्ट्र के रूप में भी कभी अंबेडकर के भारत के संविधान की बात क्यों नहीं करते और महात्मा गांधी की सत्य और अहिंसा को याद क्यों नहीं करते?

यह सीमित समझ ही बताती है कि हम ऐसे सभी राष्ट्र निर्माताओं को एक व्यक्ति के रूप में जाति-धर्म के लिए उपयोगिता की सामग्री में बदल रहे हैं, जबकि गांधी और अंबेडकर एक विचार है तथा वह किसी संकीर्णता के प्रतीक नहीं हैं। महाराणा प्रताप और शिवाजी को किसी धर्म और जाति का नायक बनाना भी संकीर्णता है, क्योंकि ये सभी इतिहास पुरुष राजा और प्रजा की मर्यादा के आधार हैं।

इस अवधारणा को बदला जाना चाहिए कि जाति और धर्म की पहचान से ही किसी देश की पहचान बनती है और विकास तथा परिवर्तन की योजनाएँ चलाई जाती हैं। यदि दलितों को सामाजिक-आर्थिक समानता का अधिकार नहीं दे पाए हैं, तो यह डॉ. अंबेडकर और हमारे संविधान का अपमान है।

इसी तरह भारत में असत्य और हिंसा का विस्तार भी महात्मा गांधी के सपनों की अवहेलना है। भारत का संविधान ही वह ताकत देता है कि-आज भी हम एक हैं और आगे-पीछे वंदे मातरम् और जन गण मन ही गा रहे हैं तथा सभी प्रकार की शपथ अपने संविधान के अंतर्गत ही ले रहे हैं।

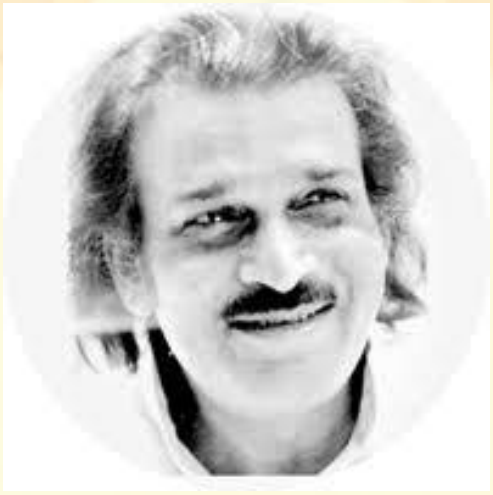

देश कागज पर बना नक्शा नहीं होता

– सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

यदि तुम्हारे घर के
एक कमरे में आग लगी
हो
तो क्या तुम
दूसरे कमरे में सो
सकते हो?
यदि तुम्हारे घर के एक
कमरे में
लाशें सड़ रहीं हों
तो क्या तुम
दूसरे कमरे में प्रार्थना
कर सकते हो?
यदि हाँ
तो मुझे तुम से
कुछ नहीं कहना है।

देश कागज पर बना
नक्शा नहीं होता
कि एक हिस्से के फट जाने
पर
बाकी हिस्से उसी तरह
साबुत बने रहें
और नदियां, पर्वत, शहर,
गांव
वैसे ही अपनी-अपनी
जगह दिखें
अनमने रहें।
यदि तुम यह नहीं मानते
तो मुझे तुम्हारे साथ
नहीं रहना है।

इस दुनिया में आदमी की
जान से बड़ा
कुछ भी नहीं है
न ईश्वर
न ज्ञान
न चुनाव
कागज पर लिखी कोई भी
इबारत
फाड़ी जा सकती है
और जमीन की सात परतों
के भीतर
गाड़ी जा सकती है।

जो विवेक
खड़ा हो लाशों को टेक
वह अंधा है
जो शासन
चल रहा हो बंदूक की नली
से
हत्यारों का धंधा है
यदि तुम यह नहीं मानते
तो मुझे
अब एक क्षण भी
तुम्हें नहीं सहना है।

याद रखो
एक बच्चे की हत्या
एक औरत की मौत
एक आदमी का
गोलियों से चिथड़ा तन
किसी शासन का ही नहीं
सम्पूर्ण राष्ट्र का है पतन।

ऐसा खून बहकर
धरती में जज्ब नहीं होता
आकाश में फहराते झंडों
को
काला करता है।
जिस धरती पर
फौजी बूटों के निशान हों
और उन पर
लाशें गिर रही हों
वह धरती
यदि तुम्हारे खून में
आग बन कर नहीं दौड़ती
तो समझ लो
तुम बंजर हो गये हो-
तुम्हें यहां सांस लेने तक
का नहीं है अधिकार
तुम्हारे लिए नहीं रहा अब
यह संसार।

आखिरी बात
बिल्कुल साफ
किसी हत्यारे को
कभी मत करो माफ
चाहे हो वह तुम्हारा यार
धर्म का ठेकेदार,
चाहे लोकतंत्र का
स्वनामधन्य पहरेदार।

PRINTED VISHWA - ISSN 25721550
ONLINE e-VISHWA - ISSN 25721569

अंतर्राष्ट्रीय हिंदी समिति का २२ वाँ द्विवार्षिक अंतर्राष्ट्रीय अधिवेशन

22th Biennial International Hindi Convention 2025

(May 2nd and 3rd 2025)

Hosted by: Northeast Ohio Chapter of IHA, Cleveland, Ohio

आतिथ्य – अंतर्राष्ट्रीय हिंदी समिति. की उत्तरपूर्व ओहायो शाखा,क्लीवलैंड, ओहियो

Convention Theme 2025

"New Generation, Hindi, and Culture in the Digital Age."

अधिवेशन का मूल विषय – 'नई पीढ़ी, डिजिटल युग में हिंदी और संस्कृति'

VENUE

QUALITY INN & SUITES, 4742 Brecksville Rd, Richfield, OH 44286

Reserve for $89.99/night (1 king or 2 double beds/room accommodating up to 4).
Call Quality Inn at (330) 659-6151, mention 'IHA Convention' to reserve.

IHA invites you to enjoy participate and learn through creative, educational, and entertaining events: Kavi Sammelan; Cultural program; Workshops in breakout sessions; Networking; Lunch and Dinner.

Please Support IHA Convention with your sponsorships at Diamond, Platinum, gold, Silver and Bronze Levels. Please Contact:

Dr. Shobha Khandewal (330)421-6638	Ashwani Bhardwaj (216)926-7890

www.hindi.org, www.iha-neohio.com, **e-mail:** ihaconvention@gmail.com

****Theme:** "New Generation, Hindi, and Culture in the Digital Age."**

Program Details:

****Session 1:****
****Date:**** May 2nd, 2025 (Friday)
****Time:**** 6 PM

****Activities:**** Inauguration, Cultural Program, Chapter Presentation, Dinner

****Session 2:****
****Date:**** May 3rd, 2025 (Saturday)
****Time:**** 9 AM to 4 PM

****Activities:**** Educational Seminars focusing on our theme, including various sessions on "New Generation, Hindi, and Culture in the Digital Age." Lunch and snacks will be provided.

****Session 3:****
****Date:**** May 3rd, 2025 (Saturday)
****Time:**** 6PM to 11 PM
****Activities:**** Welcome and Chief Guest's Addres, Dinner, and Grand Hasya Kavi Sammelan

Registration Link:
https://bit.ly/4iChb7k

****For Registration Tickets and Sponsorships, please contact us.****

Dr. Rakesh Ranjan	(216)870-4375	Anurag Gupta	(858)257-8985	Dr. Prakash Chand	(440)864-2123
Dr. ShailJain	(330)421-7528	Renu Chadda	(216)544-7285		
Dr.Somnath Roay	(440)897-9053	Kiran Khaitan	(330)622-1377		